उसका रहस्य और स्थान

गांधीजी





रचनात्मक कार्यक्रम

उसका रहस्य और स्थान

गांधीजी

अनुवादक काशिनाथ त्रिवेदी

पहली आवृत्ति, १९४६

ISBN 978-81-729-109-9

मुद्रक और प्रकाशक विवेक जितेन्द्रभाई देसाई नवजीवन मुद्रणालय

अहमदाबाद - ३८० ०१४

फोन: +91-79-28540635 | 27542634

E-mail: jitnavjivan10@gmail.com | Website: www.navajivantrust.org



प्रस्तावना

१९४१ में पहली दफा लिखे गये 'रचनात्मक कार्यक्रम-उसका रहस्य और स्थान' की यह पूरी तरह सुधारी हुई आवृत्ति है। इसमें शामिल किए गये विषय किसी खास सिलिसले से नहीं लिखे गये हैं; निश्चय ही उन्हें उनके महत्त्व के अनुसार स्थान नहीं मिला। जब पाठक देखें कि किसी खास विषय को, जो पूर्ण स्वराज्य की रचना की दृष्टि से अपना महत्त्व रखता है, इस कार्यक्रम में जगह नहीं मिली है, तो उन्हें समझ लेना चाहिए कि वह जान-बूझकर नहीं छोड़ा गया है। वे बिना हिचकिचाये उसे मेरी सूचि में शामिल कर लें और मुझे बता दें। मेरी यह सूची पूर्ण होने का दवा नहीं करती; यह तो महज मिसाल के तौर पर पेश की गई है। पाठक देखेंगे कि इसमें कई नये और महत्त्व के विषय जोड़े गये हैं।

पाठकों को, फिर वे कार्यकर्ता और स्वयं सेवक हों या न हों, निश्चित रूप से यह समझ लेना चाहिए कि रचनात्मक कार्यक्रम ही पूर्ण स्वराज्य या मुकम्मल आज़ादी को हासिल करने का सच्चा और अहिंसक रास्ता है । उसकी पूरी-पूरी सिद्धि ही सम्पूर्ण स्वतंत्रता है । कल्पना कीजिए कि देश के चालीसों करोड़ लोग देश को बिलकुल नीचे से ऊपर उठाने के लिये रचे गये समूचे रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करने में लग गये हैं । क्या कोई इस बात से इनकार कर सकता है कि इसका एक ही नतीजा हो सकता है – अपने सब अर्थोंवाला सम्पूर्ण स्वतंत्रता, जिसमें विदेशी हुकूमत को हटाना भी शामिल है ? जब आलोचक मेरी इस बात पर हँसते हैं, तो उनका मतलब यह होता है कि चालीस करोड़ लोग इस कार्यक्रम को पूरा करने की कोशिश में कभी शरीक नहीं होंगे । बेशक, उनके इस मजाक में काफ़ी सच्चाई है । लेकिन मेरा जवाब है कि फिर भी यह काम करने लायक है । अगर धुन के पक्के कुछ कार्यकर्ता अटल निश्चय के साथ इस पर तुल जाएँ, तो यह काम दूसरे किसी भी काम की तरह किया जा सकता है, और बहुतों से ज्यादा अच्छी तरह किया जा सकता है । जो भी हो, अगर इसे अहिंसक रीती से करना है तो मेरे पास इसका दूसरा कोई एवज नहीं है ।

सविनय कानून-भंग या सत्याग्रह, फिर वह सामूहिक हो या व्यक्तिगत, रचनात्मक कार्य का सहायक है, और वह सशस्त्र विद्रोह का स्थान भलीभाँति ले सकता है । सत्याग्रह के लिये भी तालीम की उतनी ही ज़रुरत है, जितनी सशस्त्र विद्रोह के लिए । सिर्फ दोनों तालीमों के तरीके अलग-अलग हैं । दोनों हालतों में लड़ाई तो तभी छिड़ती है, जब उसकी ज़रुरत आ पड़ती है, फौजी बगावत की तालीम का मतलब है हम सब हथियार चलाना सीखें, जिसका अन्त शायद एटम बम का उपयोग करना सीखने में हो सकता है । सत्याग्रह में तालीम का अर्थ है, रचनात्मक कार्यक्रम या तामीरी काम ।

इसलिए कार्यकर्ता कभी सत्याग्रह या सविनय कानून-भंग की ताक में नहीं रहेंगे । हाँ, वे अपने को उसके लिए तैयार रखेंगे, अगर कभी रचनात्मक काम को मिटाने की कोशिश हुई । एक-दो उदाहरणों से यह साफ मालूम हो जाएँगा कि कहाँ सत्याग्रह किया जा सकता है और कहाँ नहीं । हम जानते है कि राजनीतिक समझौते रोके गये हैं और रोके जा सकते हैं, मगर व्यक्ति-व्यक्ति के बीच होने वाली निजी दोस्ती को रोका नहीं जा सकता। ऐसी नि:स्वार्थ और सच्ची दोस्ती ही राजनीतिक समझौतों की बुनियाद बननी चाहिए। इसी तरह खादी के काम को, जो केन्द्रित हो गया है, सरकार मिटा सकती है। लेकिन अगर लोग खुद खादी बनायें और पहनें, तो कोई हुकूमत उन्हें रोक नहीं सकती। खादी का बनाना और पहनना लोगों पर लादा नहीं जाना चाहिए, बल्कि आज़ादी की लड़ाई के एक रूप में उन्हें खुद इसे सोच-समझकर और खुशी-खुशी अपनाना चाहिए। गाँवों को इकाई मानकर वहीं यह काम हो सकता है। इस तरह के कामों को शुरू करने वालों को भी रुकावटों का सामना करना पड़ सकता है। दुनिया में सब जगह ऐसे लोगों को कष्ट की इस आग में से गुजरना पड़ा है। बिना कष्ट सहे कहीं स्वराज्य मिला है? हिंसक लड़ाई में सत्य का सब से पहले और सब से बड़ा बलिदान होता है; किन्तु अहिंसा की लड़ाई में वह सदा विजयी रहता है। इसके सिवा, आज जिन लोगों की सरकार बनी है, उन सरकारी मुलाजिमों को अपना दुश्मन समझना अहिंसा की भावना के विरुद्ध होगा। हमें अलग होना है, लेकिन दोस्तों की तरह।

रचनात्मक कार्यक्रम को पेश करने से पहले ऊपर जो बातें मैंने कही हैं, वे यदि पाठकों के गले उतर चुकी है, तो वे समझ सकेंगे कि इस कार्यक्रम में और जिस के अमल में बेहद रस भरा है । यही नहीं, बल्कि जितना रस तथा कथित राजनीतिक कामों में और सभाओं में लेक्चर झाड़ने में आता है, उतना ही गहरा रस इस काम में भी आ सकता है । और, निश्चय ही यह रचनात्मक काम अधिक महत्त्व का और अधिक उपयोगी है ।

पूना, १३-११-१९४५

मो. क. गांधी



विषय-सूचि

प्रस्तावना

भूमिका

- १. कौमी एकता
- २. अस्पृश्यता-निवारण
- ३. शराबबन्दी
- ४. खादी
- ५. दूसरे ग्रामोद्योग
- ६. गाँवों की सफाई
- ७. नयी या बुनियादी तालीम
- ८. बड़ों की तालीम
- ९. स्त्रियाँ
- १०. आरोग्य के नियमों की शिक्षा
- ११. प्रान्तीय भाषाएँ
- १२. राष्ट्रभाषा
- १३. आर्थिक समानता
- १४. किसान
- १५. मजदूर
- १६. आदिवासी
- १७. कोढ़ी
- १८. विद्यार्थी

सविनय कानून-भंग का स्थान

उपसंहार

परिशिष्ट



भूमिका

रचनात्मक कार्यक्रम को दूसरे शब्दों में अधिक और उचित रीति से सत्य और अहिंसात्मक साधनों द्वारा पूर्ण स्वराज्य की यानी पूरी-पूरी आज़ादी की रचना कहा जा सकता है ।

स्वतंत्रता के नाम से पहचानी जानेवाली चीज को हिंसा के जरिये और इसलिए खासकर असत्यमय साधनों की सहायता से निर्माण करने की कोशिशें कितनी अधिक दुःखदायी होती हैं, सो हम भलीभाँती जानते हैं। आजकल जो लड़ाई चल रही है, उसमें हर रोज कितनी दौलत बरबाद हो रही है, कितने लोग मर रहे हैं, और सत्य का कितना खून हो रहा है!

सत्य और अहिंसा के जिरये सम्पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति का मतलब है, जात-पाँत, वर्ण या धर्म के भेद से रिहत राष्ट्र के प्रत्येक घटक की और उसमें भी उसके ग़रीब-से-ग़रीब व्यक्ति की स्वतंत्रता की सिद्धि । इस स्वतंत्रता से किसी को भी दूर या अलग नहीं रखा जा सकता । इसलिए अपने राष्ट्र से बाहर के दूसरे राष्ट्रों के साथ और राष्ट्र की जनता के भीतर उसके अलग-अलग वर्गों के परस्परावलम्बन के साथ इस स्वतंत्रता का पूरा-पूरा मेल रहेगा । अलबत्ता, जिस तरह हमारी खिंची हुई कोई भी लकीर यूक्लिड की शास्त्रीय व्याख्या की लकीर की तुलना में अधूरी रहेगी, उसी तरह तात्त्विक सिद्धान्त की अपेक्षा उसका व्यावहारिक अमल अधूरा रहता है । इसलिए जिस हद तक हम सत्य और अहिंसा का अपने रोजमर्रा के जीवन में अमल करेंगे, उसी हद तक हमारी हासिल की हुई सम्पूर्ण स्वतंत्रता भी पूर्ण होगी ।

पाठक समूचे रचनात्मक कार्यक्रम का एक नक्शा अपने मन में खींचकर देखेंगे, तो उन्हें मेरी यह बात माननी होगी कि अगर इस कार्यक्रम को कामयाबी के साथ पूरा किया जाए, तो इसका नतीजा वह आज़ादी या स्वतंत्रता ही होगी, जिसकी हमें ज़रुरत है । क्या खुद मि॰ ऐमेरी ने यह नहीं कहा है कि हिन्दुस्तान के मुख्य दल आपसमें जो समझौता करेंगे, वह मान लिया जाएगा? मि॰ ऐमेरी की बात को मैं अपनी भाषा में यों कहूँगा कि कौमी एकताकी, जो रचनात्मक कार्यक्रम के कई अंगों में से सिर्फ एक अंग है, सिद्धि के बाद सब दलों के बीच जो समझौता होगा, उसे ब्रिटिश सरकार मंजूर कर लेगी । मि॰ ऐमेरी ने यह बात सच्चे दिल से कही है या नहीं, इस पर तर्क-वितर्क करने को कोई ज़रुरत नहीं रहती; क्योंकि अगर इस तरह की एकता प्रामाणिकता के साथ यानी अहिंसा के जिरये हासिल हो जाती है, तो उसके बाद होनेवाले समझौते की अपनी असली ताकत ही ऐसी होगी कि सब दलों की उस मिली-जुली माँग को मंजूर करने के सिवा और कोई चारा किसी के पास रहा नहीं जाएगा ।

इसके खिलाफ हिंसा के जिरये हासिल होनेवाली स्वतंत्रता की काल्पनिक तो क्या, सम्पूर्ण कही जा सकनेवाली भी कोई व्याख्या नहीं । क्योंकि इस तरह की स्वतंत्रता में यह बात सहज ही आ जाती है कि राष्ट्र का जो दल हिंसा के साधनों का सब से ज्यादा पुरअसर इस्तेमाल कर सकेगा, देश में उसी का डंका बजेगा । इस तरह के पूर्ण स्वराज्य में क्या आर्थिक और क्या दूसरी, किसी भी तरह की सम्पूर्ण समानता का तो विचार तक नहीं जा सकता ।

लेकिन इस वक्त तो मैं अपने पाठकों को यही जँचाना चाहता हूँ कि स्वराज्य की स्थापना के लिए जिस अहिंसक पुरुषार्थ की ज़रुरत है, उसके लिए यह ज़रूरी है कि रचनात्मक कार्यक्रम का अमल समझ-बूझकर किया जाए; लेकिन पाठकों के लिये मेरी यह दलील मानना आवश्यक नहीं कि पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए हिंसा का साधन जरा भी उपयोगी नहीं। अगर पाठक यह मानना चाहें कि हिंसा की किसी योजना में देश के ग़रीब-से-ग़रीब व्यक्ति की स्वतंत्रता का समावेश हो सकता है तो खुशी-खुशी मानें; लेकिन अगर इसके साथ वे यह मान सकें कि राष्ट्र द्वारा रचनात्मक कार्यक्रम का ठीक-ठीक अमल होने पर उसमें से इस प्रकार की स्वतंत्रता निश्चय ही प्राप्त होगी, तो उनकी उक्त धारण के लिए मुझे आज उनसे कुछ नहीं कहना है।

अब हम एक-एक करके रचनात्मक कार्यक्रम के अंगों का विचार करें।

१. कौमी एकता

कौमी या साम्प्रदायिक एकता की ज़रुरत को सब कोई मंजूर करते हैं । लेकिन सब लोगों को अभी यह बात जँची नहीं कि एकता का मतलब सिर्फ राजनीतिक एकता नहीं है । राजनीतिक एकता तो जोर-जबरदस्ती से भी लादी जा सकती है । मगर एकता या इत्तफाक के सच्चे मानी तो हैं वह दिली दोस्ती, जो किसीके तोड़े न टूटे । इस तरह की एकता पैदा करने के लिए सब से पहली ज़रुरत इस बात की है कि काँग्रेस जन, फिर वे किसी भी धर्म के माननेवाले हों, अपने को हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी बगैरा सभी कौमों के नुमाइन्दा समझें । हिन्दुस्तान के करोड़ों बाशिन्दों में से हरएक के साथ वे अपनेपन का – आत्मीयता का – अनुभव करें; यानी वे उनके सुख-दुःख में अपने को उनका साथी समझें । इस तरह की आत्मीयता को सिद्ध करने के लिए हरएक काँग्रेसी को चाहिए कि वह अपने धर्म से भिन्न धर्म का पालन करनेवाले लोगों के साथ निजी दोस्ती कायम करे, और अपने धर्म के लिए उसके मन में जैसा प्रेम हो, ठीक वैसा ही पेम वह दूसरे धर्म से भी करे ।

जब हमारी हालत ऐसी खुशगवार हो जाएगी, तो आज रेलवे सेशनों पर 'हिन्दु चाय' और 'मुस्लिम चाय' 'हिन्दू पानी' और मुस्लिम पानी' की जो शरमानेवाली आवाज़ें हमें सुननी पड़ती हैं वे न सुननी पड़ेंगी । और, उस हालत में तो हमारे स्कूलों में और कोलेजों में न हिन्दुओं और गैर-हिन्दुओं के लिए पानी पीने के अलग-अलग कमरे होंगे, न अलग-अलग बर्तन रहेंगे और न कौमी स्कूल, कौमी कोलेज या कौमी अस्पताल ही होंगे । इस क्रान्ति या इन्किलाब की शुरुआत काँग्रेसियों को करनी होगी, और साथ ही अपने इस वाजिब बरताव से उनको किसी तरह का कोई सियासी फायदा उठाने का खयाल छोड़ देना होगा । राजनीतिक एकता तो उनके सच्चे व्यवहार से सहज ही पैदा हो जाएगी ।

हम एक अरसे से इस बात को मानने के आदी बन गये हैं कि आम जनता को सत्ता या हुकूमत सिर्फ धारासभाओं के जिरये मिलती है । इस ख्याल को मैं अपने लोगों की एक गंभीर भूल मानता रहा हूँ । इस भ्रम या भूल की वजह या तो हमारी जड़ता है या वह मोहिनी है, जो अंग्रेजों के रीति-रिवाजों ने हम पर डाल रखी है । अंगेज जाति के इतिहास के छिछले या ऊपर-ऊपर के अध्ययन से हमने यह समझ लिया है कि सत्ता शासन-तंत्र की सब से बड़ी संस्था पार्लमेण्ट से छनकर जनता तक पहुँचती है । सच बात यह है कि हुकूमत या सत्ता जनता के बीच रहती है, जनता की होती है और जनता समय-समय पर अपने प्रतिनिधियों की हैसियत से जिन को पसंद करती है, उनको उतने समय के लिए सौंप देती है । यही क्यों, जनता से भिन्न या स्वतंत्र पार्लमेण्टों की सत्ता तो ठीक, हस्ती तक नहीं होती । पिछले इक्कीस वर्षों से भी ज्यादा अरसे से मैं यह इतनी सीधी-सादी बात लोगों के गले उतारने की कोशिश करता रहा हूँ । सत्ता का असली भण्डार या खजाना तो सत्याग्रह की या सविनय कानून-भंग की शक्ति में है । एक समूचा राष्ट्र अपनी धारासभा के कानूनों के अनुसार चलने से इनकार कर दे, और इस सिविल नाफरमानी के नतीजों को बर्दास्त करने के लिए तैयार हो जाए तो सोचिए कि क्या होगा!

ऐसी जनता सरकार की धारासभा को और उसके शासन-प्रबंध को जहाँ का तहाँ, पूरी तरह, रोक देगी । सरकारकी, पुलिस की या फौज की ताकत, फिर वह कितनी ही जबरदस्त क्यों न हो, थोड़ो लोगों को ही दबाने में कारगर होती है । लेकिन जब कोई समूचा राष्ट्र असब कुछ सहने को तैयार हो जाता है, तो उसके दृढ़ संकल्प को डिगाने में किसी पुलिस की या फौज की कोई जबरदस्ती काम नहीं देती ।

फिर, पार्लमेण्ट के ढंग की शासन-व्यवस्था जभी उपयोगी होती है जब पार्लमेण्ट के सब सदस्य बहुमत के फैसलों को मानने के लिए तैयार हों। दूसरे शब्दों में, इसे यों कहिये कि पार्लमेण्टरी शासन-पद्धति का प्रबन्ध परस्पर अनुकूल समूहों में ही ठीक-ठाक काम देता है।

यहाँ हिन्दुस्तान में तो ब्रिटिश सरकार ने कौमी तरीके पर मतदाताओं के अलग-अलग गिरोह खड़े कर दिये हैं, जिसकी वजह से हमारे बीच ऐसी बनावटी दीवारें खड़ी हो गई हैं, जो आपस में मेल नहीं खाती; और व्यवस्था के अंदर हम पार्लमेण्ट के ढंग की शासन-पद्धित का दिखावा करते आये हैं। ऐसी अलग-अलग और बनावटी इकाइयों को, जिनमें आपसी मेल नहीं है, एक ही मंच पर एक-से काम के लिए इकट्ठा करने से जीती-जागती एकता कभी पैदा नहीं हो सकती। सच है कि इस तरह की धारा सभाओं के जिरये राजकाज का काम ज्यों-त्यों चलता रहता है; लेकिन इन धारा सभाओं के मंच पर इकट्ठा होकर हम तो आपस में लड़ते ही रहेंगे, और जो भी कोई हम पर हुकूमत करता होगा, उसकी तरफ से समय-समय पर मिलनेवाले हुकूमत के टुकड़ों को बाँट खाने के लिए हम तरसते रहेंगे। हमारे ये हाकिम कड़ाई के साथ हमें काबू में रखते हैं, और परस्पर विरोधी तत्त्वों को आपस में झगड़ने से रोकते हैं। ऐसी शर्मनाक हालत में से पूर्ण स्वराज्य का प्रकट होना मैं बिल्कुल असम्भव मानता हूँ।

धारासभाओं के और उनके काम के बारेमें मेरे ख्याल इतने कड़े हैं; फिर भी मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि जब तक चुनावों के जिरये बननेवाली प्रतिनिधिक संस्थाओं के लिए ग़लत उम्मीदवार खड़े रहते हैं, तब तक उन संस्थाओं में प्रगतिविरोधी लोगों को घुसने से रोकने के लिए काँग्रेस को अपने उम्मीदवार खड़े करने चाहिए।

२. अस्पृश्यता-निवारण

आज की इस घड़ी में हिन्दू धर्म से चिपटे हुए अस्पृश्यतारूपी शाप और कलंक को धो डालने की आवश्यकता के बारेमें विस्तार से कुछ लिखने की ज़रुरत नहीं । यह सच है कि इस दिशा में काँग्रेसवालों ने बहुत-कुछ किया है । लेकिन मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि ज्यादातर काँग्रेसियों ने अस्पृश्यत-निवारण को, जहाँ तक हिन्दुओं का सम्बन्ध है, खुद हिन्दू धर्म की हस्ती के लिए लाजिमी मानने के बदले उसे एक सियासी ज़रुरत की चीज माना है । अगर हिन्दू काँग्रेसी यह समझकर इस काम को उठा लें कि इसी में उनकी सार्थकता है, तो 'सनातनी' कहे जानेवाले उनके धर्मबन्धुओं पर जितना असर आज तक हुआ है, उससे कई गुना ज्यादा असर डालकर वे उनका हृदय-परिवर्तन कर सकेंगे । 'सनातनियों' के पास उन्हें लड़ाई का जोश लेकर नहीं, बल्कि अपनी अहिंसा को शोभा देनेवाली मित्रता की भावना से पहुँचना चाहिए । और खुद हरिजनों के मामले में तो हरएक हिन्दू को यह समझना चाहिए कि हरिजनों का काम उसका अपना काम है, और उसमें उसे उनकी मदद करनी चाहिए; और जिस अकुलाने वाली व भयानक अलहदगी में उन्हें रहना पड़ता है, उसमें उनके साथ शामिल होना चाहिए । ऐसा कौन है जो आज इस बात से इनकार करेगा कि हमारे हरिजन भाई-बहनों को बाकी के हिन्दू अपने से दूर रखते हैं, और इसकी वजह से हरिजनों का जिस भयावनी व राक्षसी अलहदगी का सामना करना पड़ता है, उसकी मिसाल तो दुनियाँ में कहीं ढूँढ़े भी नहीं मिलेगी ? यह काम कितना मुश्किल है, सो मैं अपने अनुभव से जानता हूँ । लेकिन स्वराज्य की इमारत को उठाने का जो काम हमने हाथ में लिया है, उसी का यह एक हिस्सा है । और, इसमें शक नहीं कि उस स्वराज्य तक पहुँचने का रास्ता सीधी चढ़ाईवाला और संकड़ा है । उस रास्ते न जाने कितनी फिसलनी चढ़ाईयाँ हैं और न जाने कितनी गहरी खाईयाँ हैं । लेकिन ठेठ चोटी पर पहुँचकर आज़ादी की साँस लेने के लिए हमें इन तमाम चढ़ाईयों और खाईयों को बिना डिगे, मजबूत कदम के साथ, पार करना होगा ।

३. शराबबन्दी

कौमी एकता अस्पृश्यता-निवारण की तरह शराबबन्दी को भी राष्ट्रीय काँग्रेस के कार्यक्रम में ठेठ सन् १९२० से शामिल किया गया है, और फिर भी इस निहायत ज़रूरी सामाजिक व नैतिक सुधार के काम में काँग्रेस वालों को जितनी दिलचस्पी चाहिए थी उतनी उन्होंने नहीं ली। अगर हमें अपना ध्येय अहिंसक पुरुषार्थ के द्वारा प्राप्त करना है, तो अफीम, शराब बगैरा चीजों के व्यसन में फँसे हुए अपने करोड़ों भाई-बहनों के भाग्य को हम भविष्य की सरकार की मेहरबानी या मरजी पर झूलता नहीं छोड़ सकते।

इस बुराई को मिटाने के काम में डोक्टर लोग सब से ज्यादा पुरअसर और कारगर मदद पहुँचा सकते हैं । शराब और अफीम के पंजे में फँसे हुए लोगों को इन व्यसनों से छुड़ाने के उपाय उन्हें ढूँढ़ निकालने होंगे और उनको आजमाना होगा ।

स्त्रियों और विद्यार्थियों के लिए सुधार के इसकाम को आगे बढ़ने का यह एक खास मौका है। प्रेमपूर्वक की गई सेवा के कई छोटे-मोटे कामों के जिरये ये लोग व्यसनियों के दिल पर इतना अधिकार जमा लेंगे कि बुरी आदतों को छोड़ने के लिए इन प्रेमी सेवकों द्वारा की गई प्रार्थना उन्हें सुननी ही पड़ेगी।

राष्ट्रीय काँग्रेस की समितियाँ आनन्द-विनोद के ऐसे केन्द्र या विश्रांति-गृह खोलें, यहाँ थके-मांदे मजदूर अपने अंगों को आराम दे सकें, साफ और तन्दुरुस्ती बढ़ाने वाले पेय या नाश्ते की सस्ती चीजें पा सकें, और अपनी पसन्द व पहुँच के खेल-तमाशों में शरीक हो सकें । यह सारा काम मन को बहुत आकर्षित करने वाला और हृदय को संस्कारी बनाकर ऊपर उठाने वाला है । स्वराज्य हासिल करने का अहिंसक रास्ता बिल्कुल नया है । उसमें पुराने मूल्यों के बदले नये मूल्यों को अपनाना होता है, पुरानी चीजों को नये तरीके से पहचानना होता है । हिंसा से हासिल किए जानेवाले स्वराज्य की राह में इस तरह के सुधारों की गुंजाईश शायद न भी हो । उस मार्ग में श्रद्धा रखने वाले लोग स्वराज्य हासिल करने की उतावली में या यों कहिये कि अपने अज्ञान के कारण यह मान बैठेंगे कि ये सारे काम आज़ादी हासिल कर चुकने पर करने के हैं, और इसलिए वे इन के अमल को उस दिन के लिए मुलतवी रखेंगे । लेकिन ऐसे लोग एक बात भूल जाते हैं कि स्थायी, निर्दोष और सच्ची मुक्ति तो दिल के अंदर से प्रकट होती है, यानी आत्मशुद्धि से मिलती है । और, रचनात्मक काम करने वाले कानूनी तौर पर शराब-बन्दी के काम का रास्ता तैयार ने कर सकें, तो भी वे उसे आसान तो कर ही सकते हैं, और उसकी कामयाबी के लिए जमीन तैयार करके रख सकते है ।

४. खादी

खादी का विषय विवादास्पद है। बहुतों को ऐसा लगता है कि खादी की हिमायत करके मैं हवा के खिलाफ नाव चलाने की मूर्खता कर रहा हूँ, जिससे आखिर में स्वराज्य की नाव को डुबो दूँगा, और देश को फिर से अंधेरे जमाने मने ले जाऊँगा । इस संक्षिप्त चर्चा में मैं खादी के पक्ष की दलीलें नहीं दूँगा । ये दलीलें मैं दूसरी जगह भरपूर दे चुँका हूँ । यहाँ तो मैं यही बताना चाहता हूँ कि हरएक हिन्दुस्तानी, खादी के काम को आगे बढ़ाने में क्या कर सकता है। खादी का मतलब है, देश के सभी लोगों की आर्थिक स्वतंत्रता और समानता का आरंभ । लेकिन कोई चीज कैसी है, यह तो उसको बरतने से जाना जा सकता है - पेड़ की पहचान उसके फल से होती है । इसलिए मैं जो कुछ कहता हूँ उसमें कितनी सचाई है, यह हरएक स्त्री-पुरुष खुद अमल करके जान ले । साथ ही खादी में जो चीजें समाई हुई हैं, उन सब के साथ खादी को अपनाना चाहिए । खादी का एक मतलब यह है कि हममें से हरएक को सम्पूर्ण स्वदेशी की भावना बढ़ानी और टिकानी चाहिए; यानी हमें इस बात का दढ़ संकल्प करना चाहिए कि हम अपने जीवन की सभी ज़रूरतों को हिन्दुस्तान की बनी चीजों से, और उनमें भी हमारे गाँव में रहनेवाली आम जनता की मेहनत और अक्ल से बनी चीजों के जरिये पूरा करेंगे । इस बारेमें आजकल हमारा जो रवैया है, उसे बिलकुल बदल डालने की यह बात है । मतलब यह कि आज हिन्दुस्तान के सात लाख गाँवों को चूसकर और बरबाद करके हिन्दुस्तान के और ग्रेट ब्रिटेन के जो दस-पाँच शहर माला-माल हो रहे हैं, उनके बदले हमारे सात लाख गाँव स्वावलंबी और स्वयंपूर्ण बनें, और अपनी राजी-खुशी से हिन्दुस्तान के शहरों और बाहर की दुनियाँ के लिए इस तरह उपयोगी बनें कि दोनों पक्षों को फायदा पहुँचे ।

इसका यह मतलब होता है कि हममें से बहुतों को अपनी रूचि और वृत्ति में जड़मूल से परिवर्तन करना होगा । अहिंसा का रास्ता कई बातों में बहुत सुगम है, तो दूसरी कई बातों में बहुत कठिन या अगम भी है । वह हरएक हिन्दुस्तानी के जीवन पर गहरा असर डालता है; वह उसके अन्दर सोई हुई और आज तक अप्रकट रही हुई शक्तियों का उसे भान कराता है, और इस ज्ञान के कारण कि यह शक्ति और सत्ता उसके पास है, उसे उत्साहित करता है । और हिन्दुस्तान के मानव-महासागर की अनके बूंदों में से एक मैं भी हूँ, इस अनुभव से बह गर्वित होता है । जमानों से जिस रोगी मनोवृत्ति को हम भूल से अहिंसा कहते और मानते आये हैं वह यह अहिंसा नहीं है । मनुष्य-जाति ने आज तक जिन अनेक शक्तियों का परिचय पाया है, यह अहिंसा उन सबसे अधिक प्रबल शक्ति है, और उसी पर मनुष्य-जाति के अस्तित्व का आधार है । साथ ही, यह अहिंसा वह शक्ति है जिसको मैंने काँग्रेस के और उसके जरिये सारी दुनिया के सामने रखने की कोशिश की है । मेरे विचार में खादी हिन्दुस्तान की समस्त जनता की एकता की, उसकी आर्थिक स्वतंत्रता और समानता की प्रतीक है । और इसलिए जवाहरलाल के काव्यमय शब्दों में कहूं तो वह 'हिन्दुस्तान की आज़ादी की पोषक है'।

फिर खादी-वृत्ति का अर्थ है, जीवन के लिए ज़रूरी चीजों की उत्पत्ति और उनके बँटवारे का विकेन्द्रीकरण । इसलिए अब तक जो सिद्धांत बना है । वह यह है कि हरएक गाँव को अपनी ज़रुरत की सब चीजें खुद पैदा कर लेनी चाहिए और शहरों की ज़रूरतें पूरी करने के लिए कुछ अधिक उत्पत्ति करनी चाहिए ।

अलबत्ता. बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों को तो एक जगह केन्द्रित करके राष्ट्र के आधीन रखना होगा। लेकिन समूचा देश मिलकर गाँवों में जिन बड़े-बड़े आर्थिक उद्योगों को चलायेगा, उनके सामने ये कोई चीज न रहेंगे।

यहाँ तक मैंने बताया कि खादी में कौन-कौन सी बातें समाई हुई हैं । अब मुझे यह बताना चाहिए कि काँग्रेसवाले खादी के काम के आगे बढ़ाने के लिए क्या-क्या करना चाहिए । खादी के उत्पादन में ये काम शामिल है – कपास बोना, कपास चुनना, उसे झाड़-झटक कर साफ करना और ओटना, रुई पींजना, पूनी बनाना, सूत कातना, सूत को मांड लगाना, सूत रंगना, उसका ताना भरना और बाना तैयार करना, सूत बुनना और कपड़ा धोना । इनमें से रंगसाजी को छोड़कर बाकी के सारे काम खादी के सिलसिले में ज़रूरी और महत्त्व के हैं, और उन्हें किये बिना काम नहीं चल सकता । इनमें से हरएक काम गाँवों में अच्छी तरह हो सकता है; और सच तो यह है कि अखिल भारत चरखासंघ समूचे हिन्दुस्तान के जिन कई गाँवों में काम कर रहा है, वहाँ ये सारे काम आज हो रहे हैं । संघ की हालकी रिपोर्ट के अनुसार इन कामों के कुछ दिलचस्प आंकड़े इस प्रकार है:

सन् १९४० में १३,४५१ से भी अधिक गाँवों में फैले हुए २,७४,१४६ देहातियों को कताई, पिंजाई, बुनाई बगैरा मिलाकर कुल ३४,८५,६०९ रूपये बतौर मजदूरी के मिले थे । इनमें १९,६४५ हरिजन और ५७,३७८ मुसलमान थे, और कातने वालों में ज्यादा तादाद औरतों की थी ।

अगर काँग्रेसवाले सच्चे दिल से और लगन से खादी के कार्यक्रम पर अमल करें, तो जितना काम हो उसका यह बहुत-से-बहुत सौवाँ हिस्सा होगा । जब से गाँवों में चलने वाले अनेक उद्योगों में से इस मुख्य उद्योग का और इसके आस-पास लगी हुई दस्तकारियों का बिना सोचे-समझे, मनमाने तरीके से और बेरहमी के साथ नाश किया गया है, तब से हमारे गाँवों की बुद्धि और तेज नष्ट हो गया है । वे सब निस्तेज और निष्प्राण बन गये हैं, और उनकी हालत उनके अपने भूखों मरने वाले मरियल ढोरों की-सी हो गई है ।

खादी के काम के लिए काँग्रेस की ओर से जो पुकार हुई है, अगर काँग्रेसवाले उसके प्रति वफादार रहना चाहते हैं, तो खादी-कार्य को योजना में वे किस तरह क्या-कर सकते हैं, इसके बारेमें अखिल भारत चरखा-संघ की ओर से समय-समय पर निकलने वाली सूचनाओं पर उन्हें भलीभाँती अमल करना चाहिए । यहाँ तो मैं इस सम्बन्ध के कुछ खास-खास नियम ही देता हूँ:

- जिन परिवारों के पास जमीन का छोटासा भी टुकड़ा हो, उन्हें कम-से-कम अपनी ज़रुरत जितनी ₹. कपास उगा लेनी चाहिए । कपास उगाने का काम वैसे बहुत आसान है । किसी जमाने में बिहार के किसानों पर कानूनन् यह फर्ज लादा गया था कि वे अपनी उपजाऊ जमीन के ३/२० हिस्से में नील की खेती करें। यह फर्ज विदेशी निलहों के स्वार्थ के लिए किसानों पर लादा गया था। तो हम अपने राष्ट्र के हित के लिए अपनी जमीन के कुछ हिस्से में खुद सोच-समझकर, अपनी खुशी से, कपास क्यों न बोयें? यहाँ पाठकों के ध्यान में यह बात आ जाएगी कि खादी-कार्य के अलग-अलग अंगों में विकेन्द्रीकरण का तत्त्व बिलकुल जड़ से शुरू होता है । आज कपास की बुवाई और खेती एक ही जगह में बड़े पैमाने पर की जाती है, और उसे हिन्दुस्तान के दूर-दूर के हिस्सों में भेजना पडता है । लडाई से पहले यह सारी कपास ज्यादातर इंग्लैण्ड और जापान को भेजी जाती थी । पहले कपास की खेती कपास बेचकर नकद रुपया कमाने के खयाल से की जाती थी और आज भी वही होता है । यही वजह है कि कपास या रुई के बाजार की तेजी-मंदी का असर किसान की आमदनी पर पड़ता है। खादीकार्य की योजना में कपास की खेती इस सट्टे से और जुऐ के दाव की-सी हालत से उबर जाती है । इस योजना के अनुसार किसान पहले अपनी ज़रुरत की चीजों की खेती करता है । हमारे किसानों को अभी यह सीखना है कि अपनी ज़रुरत की चीजों की खेती करना किसान का सब से पहला फर्ज है । अगर किसान इस चीज को सीख लें और इसके मुताबिक अपना काम करने लगें, तो बाजार की मंदी से उनके बरबाद होने की नौबत न आये।
- अगर कातने वाले के पास अपनी निज की कपास न हो, तो उसे अपनी ज़रुरत के लायक कपास ओटने के लिए खरीद लेनी चाहिए । ओटने का काम हाथ-चरखी की मदद के बिना भी बहुत आसानी से हो सकता है । हर आदमी के लिए एक पिटया और लोहे की एक छोटी सलाख अपनी कपास ओटने के लिए काफ़ी है । जहाँ यह काम न हो सके, वहाँ कातने वाले को हाथ से ओटी हुई रुई खरीद कर उसे धुनक लेना चाहिये । अपने कामके लायक पिंजाई छोटी धनुष-पींजन पर बिना ज्यादा मेहनत के अच्छी हो जाती है । अनुभव यह है कि मजदूरी की मेहनत जितनी ज्यादा बँट जाती है, यानी काम जितने ज्यादा हाथों से होता है, उसके लिए ज़रूरी औजार और हथियार भी उतने ही सस्ते और सादे होते है । धुनी हुई रुई की पूनियाँ बना लेने पर कताई शुरू हो सकती है । कातने के लिए मैं धनुष-तकुए की सिफ़ारिश खास तौर पर करता हूँ । मैंने अकसर उसका इस्तेमाल किया है । उस पर कताई की मेरी गित करीब-करीब चरखे के बराबर ही है । इसके सिवा, चरखे पर मेरा सूत जैसा निकलता है, उसके मुकाबले धनुष-तकुए पर ज्यादा महीन, ज्यादा मजबूत और ज्यादा समान कतता है । हो सकता है कि यह सब कातने वालों का यह अनुभव न हो । मैं चरखे के बदले धनुष-तकुए के इस्तेमाल पर इसलिए इतना जोर दे रहा हूँ कि उसे बना लेना ज्यादा आसान है, वह चरखे के मुकाबले सस्ता पड़ता है, और चरखे

की तरह बार-बार उसकी मरम्मत नहीं करनी पड़ती । जब कातने वाले को मोटी और पतली दोनों माल बनाना नहीं आता और उनके उतरने या फिसलने पर उन्हें ठीक से चढ़ाना-लगाना नहीं आता, या चरखे के ठीक-ठीक काम न देने पर उसे दुरुस्त कर लेना नहीं आता, तो अकसर वह बेकार पड़ा रहता है । और आज तो ऐसा मालूम होता है कि लाखों लोगों को एक साथ कातना शुरू करना पड़ेगा । अगर सचमुच ऐसा हुआ तो चूँिक धनुष-तकुआ आसानी से बन सकता है और उसको चलाना भी आसान है, इसलिए वही एक ऐसा साधन है, जो ऐसे समय झट काम दे सकता है । खुद तकली के मुकाबले भी धनुष-तकुए को बनाना आसान है और उसे पाने का सब से सहल, सब से अच्छा और सब से सस्ता तरीका यह है कि हम खुद उसे बना लें । साथ ही, एक यह बात भी याद रखने जैसी है कि हममें हरएक को सादे औजार बनाना और बरतना सीख लेना चाहिए । अब खयाल कीजिए कि कताई तक के अलग-अलग कामों में हमारा सारा देश एक साथ जुट जाए, तो हमारे लोगों में कितनी एकता पैदा हो जाए और उन्हें कितनी तालीम मिले? साथ ही, यह भी सोचिये कि जब अमीर और ग़रीब सब एक ही तरह का काम करेंगे, तो उससे पैदा होने वाली प्रीति के बन्धनों से बंधकर और आपस के भेदभावों को भूलकर वे कसी हद तक एक-दूसरे के बराबर हो जाएँगे?

इस तरह कटे हुए सूत के तीन उपयोग हो सकते हैं : एक, ग़रीबों के लिए उसे चरखा-संघ को भेंट कर देना; दूसरा, अपने उपयोग के लिए बुनवा लेना; या तीसरा, उसके बदले में जितनी मिले उतनी खादी खरीद लेना । जाहिर है कि सूत जितना महीन और बढ़िया होगा, उसकी कीमत भी उतनी ही ज्यादा होगी । इसलिए अगर काँग्रेसवाले सच्चे दिल से इसमें जुट जाएँ, तो वे कताई के और दूसरे औजारों में नये-नये सुधार करते रहेंगे और बहुतसी नई-नई बातों का पता लगाएँगे । हमारे देश में बुद्धि और श्रम के बीच बिलकुल अलगाव-सा हो गया है । नतीजा यह हुआ है कि हमारा जीवन बन्द पोखरे के पानी जैसा बन गया है । अब तक मैंने जो कहा है, उसके अनुसार इन दोनों का, यानी बुद्धि और श्रमका, अटूट गठ-बन्धन हो जाए, तो उसके परिणाम की कीमत का अंदाजा लगाना सहज नहीं ।

मैं नहीं समझता कि सेवा के हेतु से कातने की इस राष्ट्रव्यापी योजना को सफल बनाने के लिए साधारण स्त्री अथवा पुरुष को रोज एक घण्टे से ज्यादा समय देने की ज़रुरत पड़ेगी।

५. दूसरे ग्रामोद्योग

खादी के मुकाबले देहात में चलने वाले और देहात के लिए ज़रूरी दूसरे धन्धों की बात अलग है । उन सब धन्धों में अपनी राजी-खुशी से मजदूरी करने की बात बहुत उपयोगी होने जैसी नहीं है । फिर उनमें से हरएक धन्धा या उद्योग ऐसा है, जिसमें एक खास तादाद में ही लोगों को मजदूरी मिल सकती है । इसलिए ये उद्योग खादी के मुख्य काम में सहायक हो सकते हैं । खादी के अभाव में उनकी कोई हस्ती नहीं, और उनके बिना खादी का गौरव या शोभा नहीं । हाथ से पीसना, हाथ से कूटना और कछोरना, साबुन बनाना, कागज़ बनाना, चमड़ा कमाना, तेल पेरना और इस तरह के सामाजिक जीवन के लिए ज़रूरी और महत्त्व के दूसरे धन्धों के बिना गाँवों की आर्थिक रचना सम्पूर्ण नहीं हो सकती, यानी गाँव स्वयंपूर्ण घटक नहीं बन सकते । काँग्रेसी आदमी इन सब धन्धों में दिलचस्पी लेगा, और अगर वह गाँव का बाशिन्दा होगा या गाँव में जाकर रहता होगा, तो इन धन्धों में नई जान फुंकेगा और इन्हें नये रास्ते पर ले जाएगा । हरएक आदमी को, हर हिन्दुस्तानी को इसे अपना धर्म समझना चाहिए कि जब-जब और जहाँ-जहाँ मिले, वहाँ वह हमेशा गाँवों की बनी चीजें ही बरते । अगर ऐसी चीजों की माँग पैदा हो जाए, तो इसमें जरा भी शक नहीं कि हमारी ज्यादातर ज़रूरतें गाँवों से पूरी हो सकती हैं । जब हम गाँवों के लिए सहानुभूति से सोचने लगेंगे और गाँवों की बनी चीजें हमें पसंद आने लगेंगी, तो पश्चिम की नकल के रूप में यंत्रों की बनी चीजें हमें नहीं जँचेंगी; और हम ऐसी राष्ट्रीय अभीरूचि का विकास करेंगे, जो ग़रीबी, भुकमरी और आलस्य या बेकारी से मुक्त नये हिन्दुस्तान के आदर्श के साथ मेल खाती होगी।

६. गाँवों की सफाई

श्रम और बुद्धि के बीच जो अलगाव हो गया है, उसके कारण हम अपने गाँवो के प्रति इतने लापरवाह हो गये हैं कि वह एक गुनाह की माना जा सकता है । नतीजा यह हुआ कि देश में जगह-जगह सुहावने और मनभावने छोटे-छोटे गाँवों के बदले हमें धूरे-जैसे गाँव देखने को मिलते हैं । बहुत से या यों कि हये कि करीब-करीब सभी गाँवों में घुसते समय जो अनुभव होता है, उससे दिल को खुशी नहों होती । गाँव के बाहर और आसपास इतनी गँदगी होती है और वहाँ इतनी बदबू आती है कि अक्सर गाँव में जाने वाले को आँख मूँदकर और नाक दबाकर जाना पड़ता है । ज्यादातर काँग्रेसी गाँव के बाशिन्दे होने चाहिए; अगर ऐसा हो तो उनका फर्ज हो जाता है कि वे अपने गाँवों को सब तरह से सफाई के नमूने बनायें । लेकिन गाँववालों के हमेशा के यानी रोज-रोज के जीवन में शरीक होने या उनके साथ घुलने-मिलने को उन्होंने कभी अपना कर्तव्य माना ही नहीं । हमने राष्ट्रीय या सामाजिक सफाई को न तो ज़रूरी गुण माना, और न उसका विकास ही किया । यों रिवाज के कारण हम अपने ढंग से नहा-भर लेते हैं, मगर जिस नदी, तालाब या कुएँ के किनारे हम श्राद्ध या वैसी ही दूसरी कोई धार्मिक क्रिया करते हैं, और जिन जलाशयों में पवित्र होने के विचार से हम नहाते हैं, उनके पानी को बिगाड़ने या गन्दा करने में हमें कोई हिचक नहीं होती । हमारी इस कमजोरी को मैं एक बड़ा दुर्गुण मानता हूँ । इस दुर्गुण का ही यह नतीजा है कि हमारे गाँवों की और हमारी पवित्र नदियों के पवित्र तटों की लज्जाजनक दुर्दशा और गन्दगी से पैदा होने वाली बीमारियाँ हमें भोगने पड़ती हैं ।

७. नयी या बुनियादी तालीम

यह एक नया विषय है । लेकिन काँग्रेस की कार्यकारिणी समिति के सदस्यों को इसमें इतनी ज्यादा दिलचस्पी हुई और उन्हें यह चीज इतने अधिक महत्त्व की मालूम हुई कि हरिपुरा काँग्रेस के अवसर पर उन्होंने हिन्दुस्तानी तालीमी संघ को काँग्रेस की स्वीकृति का अधिकार-पत्र दे दिया है, और तब से वह अपना काम कर रहा है । इस काम का क्षेत्र इतना बड़ा है कि इसमें बहुत से काँग्रेसीयों की शक्ति लग सकती है । इस तालीम की मंशा यह है कि गाँव के बच्चों को सुधार-सँवार कर उन्हें गाँव का आदर्श बाशिन्दा बनाया जाए । इसकी योजना खासकर उन्हीं को ध्यान में रखकर तैयार की गई है । इस योजना की असल प्रेरणा भी गाँवों से ही मिली है । जो काँग्रेसजन स्वराज्य की इमारत को बिलकुल उसकी नींव या बुनियाद से चुनना चाहते हैं, वे देश के बच्चों की उपेक्षा कर ही नहीं सकते । परदेशी हुकूमत चलाने वालों ने, अनजाने ही क्यों न हो, शिक्षा के क्षेत्र में अपने काम की शुरुआत बिना चुके बिलकुल छोटे बच्चों से की है । हमारे यहाँ जिसे प्राथमिक शिक्षा कहा जाता है वह तो एक मजाक है; उसमें गाँवों में बसनेवाले हिन्दुस्तान की ज़रूरतों और माँगों का जरा भी विचार नहीं किया गया है; और वैसे देखा जाए तो उसमें शहरों का भी कोई विचार नहीं हुआ है । बुनियादी तालीम हिन्दुस्तान के तमाम बच्चों को, फिर वे गाँवों के रहने वाले हों या शहरों के हिन्दुस्तान के सभी श्रेष्ठ और स्थायी तत्त्वों के साथ जोड़ देती है। यह तालीम बालक के मन और शरीर दोनों का विकास करती है; बालक को अपने वतन के साथ जोड़ रखती है; उसे अपने और देश के भविष्य का गौरवपूर्ण चित्र दिखाती है; और उस चित्र में देखे हुए भविष्य के हिन्दुस्तान का निर्माण करने में बालक या बालिका अपने स्कूल जाने के दिन से ही हाथ बँटाने लगे इसका इन्तजाम करती है । बुनियादी तालीम का काम काँग्रेसजनों के लिए अखूट रस से भरा काम है । इसे करते हुए वे जिन बालकों के संपर्क में आयेंगे, उन्हें जितना फायदा होगा उतना ही खुद काँग्रेसजनों को भी होगा । जो काँग्रेसी इसे शुरू करना चाहे, उन्हें चाहिए कि वे तालीमी संघ के मंत्री को सेवाग्राम के पते पर लिखकर उनसे ज़रूरी जानकारी हासिल कर लें।

८. बड़ों की तालीम

काँग्रेसजनों ने इसकाम की तरह नहीं के बराबर ध्यान दिया है । जहाँ उन्होंने इस दिशा में थोड़ा-बहुत काम किया है, वहाँ अनपढ़ों को थोड़ा पढ़ना-लिखना सिखाकर ही संतोष माना है । अगर बड़ी उम्र के स्त्री-पुरुषों को तालीम देने या पढ़ाने का काम मेरे जिम्मे हो, तो मैं अपने विद्यार्थियों को अपने देश के विस्तार और उसकी महत्ता को बोध कराकर उनकी पढ़ाई शुरू करूँ । हमारे देहातियों के खयाल में उनका गाँव ही उनका समूचा देश होता है । जब वे किसी दूसरे गाँव को जाते हैं तो इस तरह बात करते हैं, मानो उनका अपना गाँव ही उनका समूचा देश या वतन हो । 'हिन्दुस्तान' तो उनके खयाल से भूगोल की किताबों में बरता जानेवाला एक शब्दमात्र है । हमारे गाँवों में कितना घोर अज्ञान घुसा हुआ है, इसका हमने अंदाज तक नहीं है । हमारे देहाती भाई और बहन नहीं जानते कि इस देश में जो विदेशी हुकूमत चल रही है, उसका देश पर कितना बुरा असर हुआ है । इधर-उधर से जो थोड़ी बातें वे जान पाते हैं, उनकी वजह से उनके दिल पर अपने परदेशी हाकिमों को धाक जम गई है । इसलिए वे परदेशियों से और उनकी हुकूमत से डरते हैं, लेकिन मन-ही-मन उसे धिक्कारते भी हैं । वे नहीं जानते कि इस हुकूमत के पंजे से, इसकी बला से, कैसे छुटा जाए । फिर, उन्हें इस बात का भी तो खयाल नहीं कि विदेशियों की जो हुकूमत यहाँ कायम है, उसका एक कारण उनकी अपनी कमजोरियां और खामियाँ भी हैं, और दूसरे, वे यह भी नहीं जानते कि इस परदेशी हुकूमत की बलाको दूर करने की ताकत खुद उनमें है । इसलिए बड़ी उम्र के अपने देशवासियों की शिक्षा का सब से पहला अर्थ मैं यह करता हूँ कि उन्हें जबानी तौर पर यानी सीधी बातचीत के जरिये सच्ची राजनीतिक तालीम दी जाए । यह तालीम किस सिलसिले से और किस तरह दी जाए, इसका एक नक्शा या खाका पहले से ही तैयार रहेगा, ताकि इसके देने में किसी तरह का डर या अन्देशा रखने की ज़रुरत न हो । मैं मानता हूँ कि अब वह जमाना लद गया है, जब इस तरह की तालीम के काम में सरकारी अफसरों की तरफ से दस्तन्दाजी हुआ करती थी । लेकिन मान लीजिए कि ऐसी दस्तन्दाजी हो, तो अपने भाई-बहनों को इकट्ठा करके बातचीत के जरिये उन्हें सच्ची तालीम देने के इस बिलकुल बुनियादी हक की अदाई के लिए हमें लड़ ही लेना चाहिए । क्योंकि इस बुनियादी हक के बिना स्वराज्य मिल ही नहीं सकता । इसमें शक नहीं कि इस तालीम के बारेमें मैंने यहाँ जो भी सलाह दी है, उसमें मैंने यह मान लिया है कि सारा काम खुलेआम होगा। अहिंसा के तरीके में डर की जरा भी गुंजाइश नहीं, और इसलिए छिपाव को भी कोई जगह नहीं। इस जबानी तालीम के साथ ही साथ लिखने-पढ़ने की तालीम भी चलेगी । इसके लिए खास लियाकत की ज़रुरत है। इस सिलसिले में पढ़ाई के वक्त को भरसक कम करने के खयाल से कई तरीके आजमाये जा रहे हैं । मेरी सिफ़ारिश यह है कि काँग्रेस की कार्यसमिति को इस काम के विशेषज्ञ माने जानेवाले लोगों की एक ऐसी स्थायी या कामचलाऊ कमेटी मुकर्रर करनी चाहिए, जो यहाँ प्रकट किए गये मेरे विचारों को और बड़ों की तालीम के तरीके पर जाहिर किए गये मेरे खयालों को किसी निश्चित योजना में शामिल

रचनात्मक कार्यक्रम | www.mkgandhi.org

करके कार्यकर्ताओं को रास्ता दिखाये। मैं कबूल करता हूँ कि इस छोटे से पैरे में मैंने जो कुछ कहा है, उससे सिर्फ काम की दिशा प्रकट हुई है। किन्तु साधारण काँग्रेसजन को इससे इस बात का पूरा पता नहीं चलता कि यह काम चलाया किस तरह जाए। फिर, चूँिक इस काम के लिए खास लियाकत की ज़रुरत है, इसलिए हरएक काँग्रेसी इसे कर भी नहीं सकता। लेकिन जो काँग्रेसजन शिक्षा का काम करते हैं, उनके लिए यहाँ दी हुई सूचनाओं के अनुसार पढ़ाई का एक क्रम तैयार कर लेना मुश्किल न होना चाहिए।

९. स्त्रियाँ

हिन्दुस्तान की स्त्रियाँ जिस अँधेरे में डूबी हुई थीं, उसमें से सत्याग्रह के तरीके ने उन्हें अपने-आप बाहर निकाल लिया है; और यह भी सच है कि दूसरे किसी तरीके से वे इतने कम समय में, जिस पर विश्वास नहीं हो सकता, आगे न आ पातीं । फिर भी स्त्री-जाति की सेवा के काम को मैंने रचनात्मक कार्यक्रम में जगह दी है, क्योंकि स्त्रियों को पुरुषों के साथ बराबरी के दरजे से और अधिकार से स्वराज्य की लड़ाई में शामिल करने के लिए जो कुछ करना चाहिए, वह सब करने की बात अभी काँग्रेसवालों के दिल में बसी नहीं है । काँग्रेसवाले अभी तक यह नहीं समझ पाये हैं कि सेवा के धार्मिक काम में स्त्री ही पुरुष की सच्ची सहायक और साथिन है । जिस रुढ़ि और कानून के बनाने में स्त्री का कोई हाथ नहीं था और जिस के लिए सिर्फ पुरुष ही जिम्मेदार है, उस कानून और रुढ़ि के जुल्मों ने स्त्री को लगातार कुचला है । अहिंसा की नींव पर रचे गये जीवन की योजना में जितना और जैसा अधिकार पुरुष को अपने भविष्य की रचना का है उतना और वैसा ही अधिकार स्त्री को भी अपना भविष्य तय करने का है। लेकिन अहिंसक समाज की व्यवस्था में जो अधिकार मिलते हैं, वे किसी न किसी कर्तव्य या धर्म के पालन से प्राप्त होते हैं । इसलिए यह भी मानना चाहिए कि सामाजिक आचार-व्यवहार के नियम स्त्री और पुरुष दोनों आपसमें मिलकर और राजी-खुशी से तय करें। इन नियमों का पालन करने के लिए बाहर की किसी सत्ता या हुकूमत की जबरदस्ती काम न देगी । स्त्रियों के साथ अपने व्यवहार और बर्ताव में पुरुषों ने इस सत्य को पूरी तरह पहचाना नहीं है । स्त्री को अपना मित्र या साथी मानने के बदले पुरुष अपने को उसका स्वामी माना है । काँग्रेसवालों का यह खास हक है कि वे हिन्दुस्तान की स्त्रियों को उनकी इस गिरी हुई हालत से हाथ पकड़कर ऊपर उठावें। पुराने जमाने का गुलाम नहीं जानता था कि उसे आज़ाद होना है, या कि वह आज़ाद हो सकता है। औरतों की हालत भी आज कुछ ऐसी ही है। जब उस गुलाम को आज़ादी मिली, तो कुछ समय तक उसे ऐसा मालूम हुआ, मानो उसका सहारा ही जाता रहा। औरतों को यह सिखाया गया है कि वे अपने को पुरुषों की दासी समझें। इसलिए काँग्रेसवालों का यह फर्ज है कि वे स्त्रियों को उनकी मौलिक स्थिति का पूरा बोध करावें और उन्हें इस तरह की तालीम दें, जिस से वे जीवन में पुरुष के साथ बराबरी के दरजे से हाथ बँटाने लायक बनें।

एक बार मन का निश्चय हो जाने के बाद इस क्रान्ति का काम आसान है। इसलिए काँग्रेसवाले इसकी शुरुआत अपने घर से करें। वे अपनी पत्नियों को मन बहलाने की गुड़िया या भोग-विलास का साधन मानने के बदले उनको सेवा के समान कार्य में अपना सम्मान्य साथी समझें। इसके लिए जिन स्त्रियों को स्कूल या कॉलेज की शिक्षा नहीं मिली है, वे अपने पतियों से, जितना बन पड़े, सीखे। जो बात पत्नियों के लिए कही है, वही ज़रूरी हेरफेर के साथ माताओं और बेटियों के लिए भी समझनी चाहिए।

रचनात्मक कार्यक्रम | www.mkgandhi.org

यह कहने की ज़रूरत नहीं कि हिन्दुस्तान की स्त्रियों की लाचारी का यह एकतरफा चित्र ही मैंने यहाँ दिया है। मैं भलीभाँति जानता हूँ कि गाँवों में औरतें अपने मर्दों के साथ बराबरी से टक्कर लेती है; कुछ मामलों में वे उनसे बढ़ी-चढ़ी हैं और उन पर हुकूमत भी चलाती हैं। लेकिन हमें बाहर से देखनेवाला कोई भी तटस्थ आदमी यह कहेगा कि हमारे समूचे समाज में कानून और रूढ़ि की रूसे औरतों को जो दरजा मिला है, उसमें कई खामियाँ हैं और उन्हें जड़मूल से सुधारने की ज़रूरत है।

१०. आरोग्य के नियमों की शिक्षा

सहज ही यह सवाल किया जा सकता है कि रचनात्मक कार्यक्रम में गाँव की सफाई को शामिल करने के बाद आरोग्य के नियमों की शिक्षा को अलग से गिनाने की क्या ज़रूरत है? इसको गाँव की सफाई में ही शामिल किया जा सकता था, मगर मुझे रचनात्मक काम के अलग-अलग हिस्सों को एक-दूसरे में मिलाना नहीं था। सिर्फ गाँव की सफाई का जिक्र करने से उसमें तन्दुरुस्ती के नियमों की तालीम का जिक्र नहीं आता। अपने शरीर की हिफाजत करना और तन्दुरुस्ती के नियमों को जानना एक अलग ही विषय है, जिसका सम्बन्ध अभ्यास से और अभ्यास द्वारा प्राप्त ज्ञान के आचरण से है। जो समाज सुव्यवस्थित है, उसमें रहनेवाले सभी लोग-नागरिक-तन्दुरुस्ती के नियमों को जानते हैं और उन पर अमल करते हैं। अब तो यह बात निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि तन्दुरुस्ती के नियमों को न जानने से और उन नियमों के पालन में लापरवाह रहने से ही मनुष्य-जाति का जिन-जिन रोगों से परिचय हुआ है, उनमें से ज्यादातर रोग उसे होते हैं। बेशक, हमारे देश की दूसरे देशों से बढ़ी-चढ़ी मृत्युसंख्या का ज्यादातर कारण गरीबी है, जो हमारे देशवासियों के शरीर को कुरेदकर खा रही है; लेकिन अगर उनको तन्दुरुस्ती के नियमों की ठीक-ठाक तालीम दी जाए, तो इसमें बहुत कमी की जा सकती है।

मनुष्य-जाति के लिए साधारणतः स्वास्थ्य का पहला नियम यह है कि मन चंगा है तो शरीर भी चंगा है। नीरोग शरीर में निर्विकार मन का वास होता है, यह एक स्वयंसिद्ध सच्चाई है। मन और शरीर के बीच अटूट सम्बन्ध है। अगर हमारे मन निर्विकार यानी नीरोग हों, तो वे हर तरह की हिंसा से मुक्त हो जाएँ; फिर हमारे हाथों तन्दुरुस्ती के नियमों का सहज भाव से पालन होने लगे और किसी तरह की खास कोशिश के बिना ही हमारे शरीर तन्दुरुस्त रहने लगें। इन कारणों से मैं यह आशा रखता हूँ कि कोई भी काँग्रेसी रचनात्मक कार्यक्रम के इस अंग के बारेमें लापरवाह न रहेगा। तन्दुरुस्ती के कायदे और आरोग्यशास्त्र के नियम बिलकुल सरल और सादे हैं और आसानी से सीखे जा सकते हैं। मगर उन पर अमल करना मुश्किल है। नीचे मैं ऐसे कुछ नियम देता हूँ:

हमेशा शुद्ध विचार करो और तमाम गन्दे व निकम्मे विचारों को मन से निकाल दो।

दिन-रात ताजी-से-ताजी हवा का सेवन करो।

शरीर और मन के काम का तौल बनाये रखो, यानी दोनों को बेमेल न होने दो।

तनकर खड़े रहो, तनकर बैठो और अपने हर काम में साफ-सुथरे रहो; और इन सब आदतों को अपनी आन्तरिक स्वस्थता का प्रतिबिम्ब बनने दो।

खाना इसलिए खाओ कि अपने-जैसे अपने मानव-बंधुओं की सेवा के लिए ही किया जा सके। भोग भोगने के लिए जीने और खाने का विचार छोड़ दो। अतएव उतना ही खाओ जितने से

रचनात्मक कार्यक्रम | www.mkgandhi.org

आपका मन और आपका शरीर अच्छी हालत में रहे और ठीक से काम कर सके। आदमी जैसा खाना खाता है, वैसा ही बन जाता है।

आप जो पानी पियें, जो खाना खायें और जिस हवा में साँस लें, वे सब बिलकुल साफ होने चाहिए। आप सिर्फ अपनी निज की सफाई से सन्तोष न मानें, बल्कि हवा, पानी और खुराक की जितनी सफाई आप अपने लिए रखें, उतनी ही सफाई का शौक आप अपने आसपास के वातावरण में भी फैलायें।

११. प्रान्तीय भाषाएँ

हमने अपनी मातृभाषाओं के मुकाबले अंग्रेजी से ज्यादा मुहब्बत रखी, जिसका नतीजा यह हुआ कि पढ़े-लिखे और राजनीतिक दृष्टि से जागे हुए ऊंचे तबके के लोगों के साथ आम लोगों का रिश्ता बिलकुल टूट गया और उन दोनों के बीच एक गहरी खाई बन गई! यही वजह है कि हिन्दुस्तान की भाषाएँ ग़रीब बन गई हैं, और उन्हें पूरा पोषण नहीं मिला। अपनी मातृभाषा में दुर्बोध और गहरे तात्विक विचारों को प्रकट करने की अपनी व्यर्थ चेष्टा में हम गोते खाते हैं। हमारे पास विज्ञान के निश्चित पारिभाषिक शब्द नहीं हैं। इस सब का नतीजा खतरनाक हुआ है। हमारी आम जनता आधुनिक मानस यानी नये जमाने के विचारों से बिलकुल अछूती रही है। हिन्दुस्तान की महान भाषाओं की जो अवगणना हुई है और उसकी वजह से हिन्दुस्तान को जो बेहद नुकसान पहुँचा है, उसका कोई अंदाजा या माप आज हम निकाल नहीं सकते, क्योंकि हम इस घटना के बहुत नजदीक हैं। मगर इतनी बात तो आसानी से समझी जा सकती है कि अगर आज तक हुए नुकसान का इलाज नहीं किया गया, यानी जो हानि हो चुकी है उसकी भरपाई करने की कोशिश हमने न की, तो हमारी आम जनता को मानसिक मुक्ति नहीं मिलेगी, वह रूढ़ियों और वहमों से घिरी रहेगी। नतीजा यह होगा कि आम जनता स्वराज्य के निर्माण में कोई ठोस मदद नहीं पहुँचा सकेगी। अहिंसा की बुनियाद पर रचे गये स्वराज्य की चर्चा में यह बात शामिल है कि हमारा हरएक आदमी आज़ादी की हमारी लड़ाई में खुद स्वतंत्र रूप से सीधा हाथ बँटाये। लेकिन अगर हमारी आम जनता लड़ाई के हर पहलू और उसकी हर सीढ़ी से परिचित न हो और उसके रहस्य को भलीभाँति न समझती हो, तो स्वराज्य की रचना में वह अपना हिस्सा किस तरह अदा करेगी? और जब तक सर्वसाधारण की अपनी बोली में लड़ाई के हर पहलू व कदम को

अच्छी तरह समझाया नहीं जाता, उनसे यह उम्मीद कैसे की जाए कि वे उसमें हाथ बँटायेंगे?

१२. राष्ट्रभाषा

समूचे हिन्दुस्तान के साथ व्यवहार करने के लिए हम को भारतीय भाषाओं में से एक ऐसी भाषा की ज़रूरत है, जिसे आज ज्यादा-से-ज्यादा तादाद में लोग जानते और समझते हों और बाकी के लोग जिसे झट सीख सकें। इसमें शक नहीं कि हिन्दी ही ऐसी भाषा है। उत्तर के हिन्दू और मुसलमान दोनों इस भाषा को बोलते और समझते हैं। यही भाषा जब उर्दू लिपि में लिखी जाती है तो उर्दू कहलाती है। राष्ट्रीय काँग्रेस ने सन् १९२५ के अपने कानपुर अधिवेशन में जो मशहूर प्रस्ताव पास किया था, उसमें सारे हिन्दुस्तान की इसी भाषा को हिन्दुस्तानी कहा है। और तब से सिद्धान्त में ही क्यों न हो, हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा मानी गई है। 'हिन्दुस्तान की आम जनता की राजनीतिक शिक्षा के लिए हिन्दुस्तान की भाषाओं के महत्त्व को पहचानने और मानने की एक खास कोशिश सन् १९२० में शुरू की गई थी। इसी हेतु से इस बात का खास प्रयत्न किया गया था कि सारे हिन्दुस्तान के लिए एक ऐसी भाषा को जान और मान लिया जाए, जिसे राजनीतिक दृष्टि से जागा हुआ हिन्दुस्तान के लिए एक ऐसी भाषा को जान और मान लिया जाए, जिसे राजनीतिक दृष्टि से जागा हुआ हिन्दुस्तान के अलग-अलग प्रान्तों से आये हुए काँग्रेसी समझ सकें। इस राष्ट्रभाषा को हमें इस तरह सीखना चाहिए, जिस से हम सब इसकी दोनों शैलियों को समझ और बोल सकें और इसे दोनों लिपियों में लिख सकें।

मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि बहुत से काँग्रेसजनों ने इस ठहराव पर अमल नहीं किया। मेरी समझ में इसका एक शर्मनाक नतीजा यह हुआ है कि आज भी अंग्रेजी बोलने का आग्रह रखने वाले और अपने समझने के लिए दूसरों को अंग्रेजी में ही बोलने के लिए मजबूर करने वाले काँग्रेसजनों का बेहूदा दृश्य हमें देखना पड़ता है। अंग्रेजी भाषा ने हम पर जो मोहिनी डाली है, उसके अरस से हम अभी तक छूटे नहीं हैं। इस मोहिनी के वश होकर हम लोग हिन्दुस्तान को अपने ध्येय की ओर आगे बढ़ने से रोक रहे हैं। जितने साल हम अंग्रेजी सीखने में बरबाद करते हैं उतने महीने भी अगर हम हिन्दुस्तानी सीखने की तकलीफ न उठायें, तो सचमुच कहना होगा कि जन-साधारण के प्रति अपने प्रेम की जो डींगें हम हाँका करते हैं वे निरी डींगें ही हैं।

१३. आर्थिक समानता

रचनात्मक काम का यह अंग अहिंसापूर्ण स्वराज्य की मुख्य चाबी है। आर्थिक समानता के लिए काम करने का मतलब है, पूँजी और मजदूरी के बीच के झगड़ों को हमेशा के लिए मिटा देना। इसका अर्थ यह होता है कि एक ओर से जिन मुट्टीभर पैसेवाले लोगों के हाथ में राष्ट्र की संपत्ति का बड़ा भाग इकट्ठा हो गया है, उनकी संपत्ति को कम करना और दूसरी ओर से जो करोड़ों लोग अधपेट खाते और नंगे रहते हैं उनकी संपत्ति में वृद्धि करना। जब तक मुट्टीभर धनवानों और करोड़ों भूखे रहने वालों के बीच बेइन्तहा अन्तर बना रहेगा, तब तक अहिंसा की बुनियाद पर चलनेवाली राज-व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। आज़ाद हिन्दुस्तान में देश के बड़े-से-बड़े धनिकों के हाथ में हुकूमत का जितना हिस्सा रहेगा उतना ही गरीबों के हाथ में भी होगा; और तब नई दिल्ली के महलों और उनकी बगल में बसी हुई ग़रीब मजदूर बस्तियों के टूटे-फूटे झोंपड़ों के बीच जो दर्दनाक फर्क आज नज़र आता है, वह एक दिन को भी नहीं टिकेगा। अगर धनवान लोग अपने धन को और उसके कारण मिलनेवाली सत्ता को खुद राजीखुशी से छोड़कर और सब के कल्याण के लिए सब के साथ मिलकर बरतने को तैयार न होंगे, तो यह तय समझिये कि हमारे देश में हिंसक और खूंखार क्रांति हुए बिना न रहेगी।

ट्रस्टीशिप या सरपरस्ती के मेरे सिद्धान्त का बहुत मजाक उड़ाया गया है, फिर भी मैं उस पर कायम हूँ। यह सच है कि उस तक पहुँचने यानी उसका पूरा-पूरा अमल करने का काम किठन है। क्या अहिंसा की भी यही हालत नहीं? फिर भी १९२० में हमने यह सीधी चढ़ाई चढ़ने का निश्चय किया था। अब तक हमने उसके लिए जो पुरुषार्थ किया है वह कर लेने जैसा था, इसे अब हम समझ चुके हैं। इस पुरुषार्थ की खास बात यह है कि रोज-रोज की खोज और कोशिश से हमें अधिकाधिक यह जान लेना है कि अहिंसा का तत्त्व किस तरह काम करता है। काँग्रेसवालों से यह उम्मीद की जाती है कि वे सब संजीदगी और लगन के साथ, सचेत रहकर, इस बात का पता लगायें कि अहिंसा क्या चीज है, क्यों उसका व्यवहार करना है, और वह किस तरह अपना काम करती है। सब को इस सवाल पर भी सोचना है कि आज की सामाजिक व्यवस्था में मनुष्य-मनुष्य के बीच जो तरह-तरह की असमानताएँ मौजूद हैं, वे हिंसा से दूर होंगी या अहिंसा से। मेरे खयाल में हिंसा का रास्ता कैसा है, यह हम जानते हैं। उस रास्ते समानता के मामले में कहीं सफलता मिली हमने जानी नहीं।

अहिंसा के जिरये समाज में हेरफेर करने के प्रयोग अभी चल रहे हैं, और उनकी तफसील तैयार हो रही है। इन प्रयोगों में प्रत्यक्ष दिखाने जैसा तो कोई खास या बड़ा काम हमने किया नहीं हैं। मगर यह तय है कि चाल कितनी ही धीमी क्यों न हो, फिर भी इस तरीके पर समानता की दिशा में काम तो शुरू हो चुका है। और चूँिक अहिंसा का रास्ता हृदय-परिवर्तन का रास्ता है, इसलिए उसमें जो भी हेरफेर होते हैं वे कायमी होते हैं। जिस समाज या राष्ट्र की रचना अहिंसा की नींव पर हुई है, वह अपनी इमारत पर होनेवाले तमाम बाहरी या अन्दरूनी हमलों का सामना करने की ताकत रखता है। राष्ट्रीय काँग्रेस में

रचनात्मक कार्यक्रम | www.mkgandhi.org

धनवान काँग्रेसी भी हैं। इस मामले में पहल करके उन्हें औरों को रास्ता दिखाना है। स्वराज्य की हमारी यह लड़ाई हरएक काँग्रेसी को इस बात का मौका देती है कि वह अपने दिल की पूरी गहराई में उतरकर अपने आपको जाँचे-परखे। अपनी लड़ाई के अन्त में हमें जिस हिन्दुस्तान की रचना करनी है, उसमें यदि समानता को सिद्ध करना हो, तो उसकी बुनियाद अभी से पड़नी चाहिए। जो लोग यह समझकर चलते हैं कि बड़े-बड़े सुधार तो स्वराज्य कायम होने पर ही होंगे या किए जाएँगे, वे सब जड़ से ही इस बात को समझने में ग़लती करते हैं कि अहिंसक स्वराज्य का काम किस तरह होता है। यह अहिंसक स्वराज्य किसी अच्छे मुहूर्त में अचानक आसमान से नहीं टपक पड़ेगा। बल्कि जब हम सब मिलकर एक साथ अपनी मेहनत से एक-एक ईंट चुनते चलेंगे, तभी स्वराज्य की इमारत खड़ी हो सकेगी। इस दिशा में हमने काफी लम्बी और अच्छी मंजिल तय की है। लेकिन स्वराज्य की सम्पूर्ण शोभा और भव्यता का दर्शन करने से पहले हम को अभी इससे भी ज्यादा लम्बा और थकाने वाला रास्ता तय करना है। इसलिए हरएक काँग्रेसी को अपने आपसे यह सवाल पूछना है कि इस आर्थिक समानता की स्थापना के लिए उसने कया किया है?

१४. किसान

इस रचनात्मक कार्यक्रम में सभी बातों का समावेश नहीं हुआ है। स्वराज्य की इमारत एक जबरदस्त चीज है, जिसे बनाने में अस्सी करोड़ हाथों को काम करना है। इन बनाने वालों में किसानों की यानी खेती करनेवालों की तादाद सब से बड़ी है। सच तो यह है कि स्वराज्य की इमारत बनाने वालों में ज्यादातर (करीब ८० फीसदी) वही लोग हैं, इसलिए असल में किसान ही काँग्रेस हैं ऐसी हालत पैदा होनी चाहिए। आज ऐसी बात नहीं है। लेकिन जब किसानों को अपनी अहिंसक ताकत का खयाल हो जायगा, तो दुनियाँ की कोई हुकूमत उनके सामने टिक नहीं सकेगी।

हुकूमत को हिथयाने के लिए खेली जानेवाली राजनीति की चालों में किसानों का कोई उपयोग न होना चाहिए। उनके ऐसे अनुचित उपयोग को मैं अहिंसक पद्धित का विरोध समझता हूँ। जो किसानों या खेतिहरों को संगठित करने का मेरा तरीका जानना चाहते हैं, उन्हें चम्पारन के सत्याग्रह की लड़ाई का अध्ययन करने से लाभ होगा। हिन्दुस्तान में सत्याग्रह का पहला प्रयोग चम्पारन में हुआ था। उसका नतीजा कितना अच्छा निकला, यह सारा हिन्दुस्तान भलीभाँती जानता है। चम्पारन का आन्दोलन आम जनता का आन्दोलन बन गया था और वह बिलकुल शुरू से लेकर अखीर तक पूरी तरह अहिंसक रहा था। उसमें कुल मिलाकर कोई बीस लाख से भी ज्यादा किसानों का सम्बन्ध था। सौ साल पुरानी एक खास तकलीफ को मिटाने के लिए यह लड़ाई छेड़ी गई थी। इसी शिकायत को दूर करने के लिए पहले कई खूनी बगावतें हो चुकी थीं। किसान बिलकुल दबा दिये गये थे। मगर अहिंसक उपाय वहाँ छह महीनों के अन्दर पूरी तरह सफल हुआ। किसी तरह का सीधा राजनीतिक आन्दोलन या राजनीति के प्रत्यक्ष प्रचार की मेहनत किए बिना ही चम्पारन के किसानों में राजनीतिक जागृति पैदा हो गई। उनकी शिकायत को दूर करने में अहिंसा ने जो काम किया, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिल जाने से वे सब राष्ट्रीय काँग्रेस की ओर खिंच आये और बाबू ब्रजिकशोरप्रसाद व बाबू राजेन्द्रप्रसाद के नेतृत्व में सत्याग्रह की पिछली लड़ाईयों में उन्होंने अपनी ताकत का पूरा परिचय दिया।

इनके सिवा, खेड़ा, बारडोली और बोरसद में किसानों ने जो लड़ाईयाँ लड़ी, उनके अध्यन से भी पाठकों को लाभ होगा। किसान-संगठन की सफलता का रहस्य इस बात में हैं कि किसानों की अपनी जो तकलीफें हैं, जिन्हें वे समझते और बुरी तरह महसूस करते हैं, उन्हें दूर कराने के सिवा दूसरे किसी भी राजनीतिक हेतु से उनके संगठन का दुरुपयोग न किया जाए। किसी एक निश्चित अन्याय या शिकायत के कारण को दूर करने के लिए संगठित होने की बात वे झट समझ लेते हैं। उनको अहिंसा का उपदेश करना नहीं पड़ता। अपनी तकलीफों के एक कारगर इलाज के रूप में वे अहिंसा को समझकर उसे आजमालें और फिर उनसे कहा जाए कि उन्होंने जिसे आजमाया है वही अहिंसक पद्धित है, तो वे फौरन ही अहिंसा को पहचान लेते हैं और उसके रहस्य को समझ जाते हैं।

जिन काँग्रेसजनों को इसमें दिलचस्पी हो, वे ऊपर के इन उदाहरणों का अध्ययन करके जान लें कि किसानों के बीच रहकर उनकी सेवा का काम किस तरह किया जाए। मैं यह मानता हूँ कि किसानों के संगठन का जो तरीका कुछ काँग्रेसजनों ने अपनाया है, उससे किसानों को जरा भी फायदा नहीं हुआ, उलटे शायद नुकसान हुआ होगा। लेकिन फायदे और नुकसान की बात को छोड़कर भी मुझे यह तो कहना ही होगा कि उनका अपनाया हुआ तरीका अहिंसा का तरीका नहीं है। कहना न होगा कि इन कार्यकर्ताओं में से कुछ साफ-साफ इस बात को स्वीकार करते हैं कि वे अहिंसक तरीके को नहीं मानते। ऐसे कार्यकर्ताओं को मेरी सलाह है कि वे अपने काम के सिलसिले में काँग्रेस के नाम का उपयोग न करें और काँग्रेसी के नाते काम न करें।

अब तक मैंने जो कुछ कहा है, उससे पाठकों को यह मालूम हो चुका होगा कि किसानों और मजदूरों को अखिल भारतीय पैमाने पर संगठित करने की जो होड़-सी लगी हुई है, उससे मैं क्यों दूर रहा हूँ। हम सब मिलकर एक ही दिशा में आगे बढ़ें तो कितना अच्छा हो! लेकिन हमारे देश-जैसे बड़े देश में यह शायद होगा नहीं। खैर, जाने दीजिए इन सब बातों को। यह सच है कि अहिंसा के रास्ते किसी पर किसी तरह की जबरदस्ती नहीं की जा सकती। अहिंसक पद्धति का प्रत्यक्ष कार्य और केवल तर्क से सिद्ध होनेवाली दलीलें, ये दोनों मिलकर अपना काम किए बिना न रहेंगे।

मेरी यह राय है कि काँग्रेस को अपनी देखरेख में एक ऐसा विभाग खोलना चाहिए, जो मजदूरों की तरह किसानों या खेतिहरों के भी सवालों को हल करने का काम करे।

१५. मजदूर

अहमदाबाद के मजदूर-संघ का नमूना समूचे हिन्दुस्तान के लिए अनुकरणीय है। वह शुद्ध अहिंसा की बुनियाद पर खड़ा किया गया है। अपने अब तक के कार्यकाल में उसे कभी पीछे हटने का मौका नहीं आया। बिना किसी तरह का शोरगुल, धांधली या दिखावा किए ही उसकी ताकत बराबर बढ़ती गई है। उसका अपना अस्पताल है, मिल-मजदूरों के बच्चों के लिए उसके अपने मदरसे हैं, बड़ी उमर के मजदूरों को पढ़ाने के क्लास हैं, उसका अपना छापखान और खादी-भंडार है, और मजदूरों के रहने के लिए उसने घर भी बनवाये हैं। अहमदाबाद के करीब-करीब सभी मजदूरों के नाम मतदाताओं की सूची में दर्ज हैं और चुनावों में वे पुरअसर तरीके से हाथ बँटाते हैं। काँग्रेस की स्थानीय प्रदेश कमेटी के कहने से अहमदाबाद के मजदूरों ने मतदाता के नाते अपने नाम दर्ज करवाये थे। यह मजदूर-संघ काँग्रेस की दलबन्दीवाली राजनीति में कभी शरीक नहीं हुआ। शहर की म्युनिसिपैलिटी की नीति पर संघवालों का असर पड़ता है। संघ अब तक अनेक हड़तालों को अच्छी सफलता के साथ चला चुका है और ये सब हड़तालें पूरी तरह अहिंसक रही हैं। यहाँ के मजदूरों और मालिकों ने अपने आपसी झगड़े मिटाने के लिए ज्यादातर अपनी राजीखुशी से पंच की नीति को स्वीकार किया है। मेरा बस चले तो मैं हिन्दुस्तान की तमाम मजदूर-संस्थाओं का संचालन अहमदाबाद के मजदूर-संघ की नीति पर करूँ। अखिल भारत ट्रेड यूनियन काँग्रेस के काम में दखल देने की इस संघ ने कभी इच्छा नहीं की, और न उसका कोई असर अपने संगठन पर होने दिया। मैं उस दिन की आशा लगाये बैठा हूँ, जब ट्रेड यूनियन काँग्रेस अहमदाबाद के मजदूर-संघ के तरीके को अपना लेगी और अखिल भारत मजदूर-संस्था के एक अंग की हैसियत से अहमदाबाद का मजदूर-संघ उसमें समा जाएगा। लेकिन मुझे कोई जल्दी नहीं है। समय पाकर वह दिन अपने-आप आ जाएगा।

१६. आदिवासी

रानीपरज शब्द की तरह वह आदिवासी शब्द भी नया बनाया हुआ है। रानीपरज के बदले पहले कालीपरज (यानी काली प्रजा हालाँकि उनकी चमड़ी का रंग दूसरे किन्हीं लोगों की चमड़ी से अधिक काला नहीं है) शब्द बरता जाता था। मेरा खयाल है कि वह शब्द भी जुगतराम दवे ने गढ़ा था। भील, गोंड और ऐसे ही दूसरे लोगों के लिए, जिन्हें पहाड़ी या जंगली जातियों-जैसे अनेक जुदा-जुदा नामों से पुकारा जाता है, गढ़े गये इस नये शब्द का अक्षरशः अर्थ देश के असली निवासी होता है, और मैं जानता हूँ कि यह ठक्करबापा का बनाया हुआ शब्द है।

आदिवासियों की सेवा भी रचनात्मक कार्यक्रम का एक अंग है। इस कार्यक्रम के जुदा-जुदा अंगों की चर्चा करते-करते उनके ठेठ सोलहवाँ नम्बर लगा है, लेकिन इससे कोई उनके महत्त्व को कम न समझे। हमारा देश इतना विशाल है और उसमें बसने वाली जातियाँ इतनी ज्यादा और विविध हैं कि अपने देश के सभी निवासियों के और उनकी दशा के बारेमें हममें से अच्छे-से-अच्छे लोग भी जितना उन्हें जान लेना चाहिए उतना सब जान नहीं पाते। अगर हमारे राष्ट्र में रहने वाली हरएक इकाई को इस बात का सजग भान न हो कि बाकी के दूसरे सब घटकों या इकाईयों के सुख-दुःख उसके अपने सुख-दुःख हैं और हम सब एक हैं, तो अपने देश की विशालता और विविधता की यह बात ज्यों-ज्यों हमारी समझ में आती जाती है त्यों-त्यों अपनी एक राष्ट्रीयता के दावे को साबित करने का काम कितना कठिन है इसका खयाल हमें होता जाता है।

समूचे हिन्दुस्तान में इन आदिवासियों की आबादी दो करोड़ की है। ठक्करबापा ने बरसों पहले गुजरात के भीलों की सेवा का काम शुरू किया था। सन् १९४० के लगभग थाना जिले में श्री बालासाहब खेर ने अपनी स्वाभाविक लगन से इस अत्यन्त आवश्यक सेवाकार्य को अपने हाथ में लिया। इस समय वे आदिवासी-सेवा-मण्डल के सभापति हैं।

हिन्दुस्तान के दूसरे हिस्सों में ऐसे दूसरे कई सेवक काम कर रहे हैं, फिर भी अभी उनकी संख्या काफ़ी नहीं है। सच है कि 'सेवारूपी खेती की फसल खूब आई है, मगर उसके काटने वाले कम हैं'। और इससे कौन इनकार कर सकता है कि इस तरह की तमाम सेवा महज भूतदया की भावना से प्रेरित सेवा नहीं बल्कि ठोस राष्ट्र सेवा है, और वह हमें पूर्ण स्वराज्य के ध्येय के ज्यादा नजदीक ले जाती है?

१७. कोढ़ी

कोढ़ी एक बदनाम शब्द है। कोढ़ियों के घाम के नाते मध्य अफ्रीका के बाद दूसरा नम्बर हिन्दुस्तान का आता है। फिर भी हममें जो सब से श्रेष्ठ या बढ़े-चढ़े हैं, उन्हीं की तरह ये कोढ़ी भी हमारे समाज के अंग हैं। पर हक़ीकत यह है कि चोटी के उन कुछ लोगों पर ही हम सब का ध्यान लगा हुआ है, जब कि उन्हें हमारे ध्यान की कम-से-कम ज़रूरत है। और जिन कोढ़ियों की सार-संभाल की सब से ज्यादा ज़रूरत है, उन्हीं की हमारे यहाँ जान-बूझकर उपेक्षा की जाती है। दिल होता है कि इस उपेक्षा को हृदयहीनता के नाम से पुकारूँ, और अहिंसा की दृष्टि से तो सचमुच ही इसके लिए दूसरा कोई विशेषण नहीं है। हिन्दुस्तान में काम करनेवाले अकेले ईसाई मिशनरी ही हमारे कोढ़ियों की चिन्ता करते हैं, और इसके लिए वे अवश्य ही धन्यवाद के पात्र हैं। कोढ़ियों की सार-सँभाल के लिए हिन्दुस्तानियों की ओर से चलनेवाली एकमात्र संस्था वर्धा के पास काम कर रही है, और श्री मनोहर दीवान उसे केवल प्रेमपूर्ण सेवा के भाव से चला रहे हैं। इस संस्था को श्री विनोबा भावे की प्रेरणा और रहनुमाई प्राप्त है। अगर हिन्दुस्तान में सचमुच नवजीवन का संचार हुआ है, और हम सब सत्य और अहिंसा के मार्ग से कम-से-कम समय में पूर्ण स्वराज्य पाने के लिए दिल से बेचैन हैं, तो हिन्दुस्तान में एक भी कोढ़ी या एक भी भिखारी ऐसा न होना चाहिए, जिसका नाम हमारे पास दर्ज न हो और जिसकी सार-सँभाल हमने की न हो। रचनात्मक कार्यक्रम की इस सुधारी हुई आवृत्ति में हमारे रचना-कार्य की जंजीर की एक कड़ी के नाते कोढ़ी को और उसकी सेवा के काम को मैं खास तौर पर बढ़ा रहा हूँ, क्योंकि आज हमारे देश में कोढ़ियों की जो दशा है, वही दशा आजकल की सुधरी हुई दुनियाँ में हमारी है, बशर्ते कि हम अपने आसपास ठीक से गौर कर के देखें। समुद्र पार के अपने बेशबन्धुओं की दशा का विचार करने से सब को मेरी इस बात की सच्चाई का विश्वास हो जाएँगा।

१८. विद्यार्थी

रचनात्मक कार्यक्रम की चर्चा में मैंने विद्यार्थियों को बिलकुल अखीर के लिए रख छोड़ा था। मैंने हमेशा उनके साथ गाढ़ सम्बन्ध रखा और बढ़ाया है। विद्यार्थी मुझ पहचानते हैं और मैं उनको पहचानता हूँ। उन्होंने मेरा बहुत काम किया हैं। कॉलेजों से निकले हुए बहुतेरे विद्यार्थी आज मेरे माने हुए साथी हैं। साथ ही, मैं यह भी जानता हूँ कि विद्यार्थी भविष्य की आशा हैं। जब असहयोग आन्दोलन अपनी पूरी बहार में था, तब उनसे कहा गया था कि वे स्कूलों और कॉलेजों में पढ़ना छोड़ दें। काँग्रेस की इस प्रकार के जवाब में जिन अध्यापकों और विद्यार्थियों ने स्कूलों और कॉलेजों में जाना छोड़ दिया था, उनमें से कई आज भी राष्ट्र के काम में दृढ़ता के साथ लगे हुए हैं, जिससे खुद उनको और साथ ही देश को बहुत फायदा पहुँचा है। यह पुकार दुबारा नहीं की गई, क्योंकि आज उसके लायक हवा नहीं है। लेकिन उस समय के अनुभव से इतना तो मालूम हुआ कि वर्तमान शिक्षा का मोह, यद्यपि वह झूठा और अस्वाभाविक है, देश के नौजवानों पर कुछ ऐसा हावी हुआ है कि वे उससे छूट नहीं सकते। कॉलेज में पढ़ने से 'केरिअर' सुधर जाता है। दूसरे, हमारे देश में ब्रिटिश हुकूमत ने सफेदपोश लोगों का जो एक समूह पैदा किया है, उसमें शामिल होने का परवाना भी कॉलेज की शिक्षा से मिलता है। ज्ञान की भूख को, जो स्वाभाविक और क्षम्य कही जाएँगी, तृप्त करने के लिए तो रास्ता बना हुआ है, उस पर चले बिना चारा नहीं। मातृभाषा के स्थान को पचाकर बैठी हुई बिलकुल पराई भाषा को सीखने में वे अपने कितने कीमती वर्ष बिगाड़ देते हैं, इसकी उन्हें कोई परवाह नहीं। और, इसमें जो गंभीर द्रोह या पाप होता है, उसका तो उन्हें पता तक नहीं। इन विद्यार्थियों और इनके शिक्षकों के मन में कोई ऐसा भूत भर गया है, जिससे उनके खयाल में आज के जमाने के नये विचारों और आधुनिक विज्ञान का ज्ञान पाने के लिए अपने घर की भाषाएँ बिलकुल निकम्मी ठहरती हैं। मुझे आश्चर्य इस बात का है कि जापानवाले अपना काम किस तरह चलाते होंगे, क्योंकि जहाँ तक मैं समझा हूँ, उन्हें सारी शिक्षा अपनी भाषा में दी जाती है। और चीन के सब से बड़े अधिकारी जनरलिस्सिमो च्यांग काई शेक को अंग्रेजी अगर आती भी है तो नहीं के बराबर ही।

मगर हमारे ये विद्यार्थी जैसे हैं वैसे हैं। और इन्हीं नौजवान स्त्रियों और पुरुषों में से राष्ट्र के भावी नेता तैयार होनेवाले हैं। दुर्भाग्य यह है कि उन पर जिस-तिस हवा का असर हो जाता है। अहिंसा की तरफ उनका कोई खास खिंचाव नहीं। घूंसे के बदले घूंसा या एक के बदले दो घूंसों की बात उन्हें आसानी से पटती और पसंद पड़ जाती है। उसका परिणाम, फिर वह क्षणजीवी ही क्यों न हो, तत्काल दिखाई पड़ता है। लड़ाई के मौके पर जानवर-जानवर या मनुष्य-मनुष्य के बीच हिंसक या पाशवी शक्ति की कभी न खतम होनेवाली जो होड़ाहोड़ी हमें देखने को मिलती है वही यह चीज है। अहिंसा को अच्छी तरह पहचानने के लिए धीरज के साथ शोध और उससे भी ज्यादा धीर और कठोर आचरण की ज़रूरत होती है। किसानों और मजदूरों के मामले में जिन कारणों से मैंने अपना रास्ता अलग चुना है, उन्हीं

कारणों से मैं उन लोगों के साथ भी होड़ में शामिल नहीं हुआ, जो विद्यार्थियों के हृदय पर अधिकार करने की उम्मीद रखते हैं। लेकिन अगर विद्यार्थी शब्द का अधिक व्यापक अर्थ किया जाए, तो मैं भी उनका सहपाठी विद्यार्थी हूँ, ज्योंकि मेरी युनिवर्सिटी दूसरी है। मैं शोध या अनुसन्धान का जो काम कर रहा हूँ, उसमें शामिल होने के लिए अपनी इस युनिवर्सिटी में भरती होने के नियम इस प्रकार हैं:

- विद्यार्थियों को दलबन्दीवाली राजनीति में कभी शामिल न होना चाहिए। विद्यार्थी विद्या के खोजी और ज्ञान की शोध करनेवाले हैं, राजनीति के खिलाड़ी नहीं।
- उन्हें राजनीतिक हड़तालें न करनी चाहिए। विद्यार्थी वीरों की पूजा चाहे करें, उन्हें करनी चाहिए; लेकिन जब उनके वीर जेलों में जाएँ, या मर जाएँ, या यों किहये कि उन्हें फाँसी पर लटकाया जाए, तब उनके प्रति अपनी भिक्त प्रकट करने के लिए उनको उन वीरों के उत्तम गुणों का अनुकरण करना चाहिए, हड़ताल नहीं। ऐसे मौंकों पर विद्यार्थियों का शोक असह्य हो जाए और हरएक विद्यार्थी की वैसी भावना बन जाय, तो अपनी संस्था के अधिकारी की सम्मित से स्कूल और कॉलेज बन्द रखे जाएँ। संस्था के अधिकारी विद्यार्थियों की बात न सूनें, तो उन्हें छूट है कि वे उचित रीति से, सभ्यतापूर्वक, अपनी-अपनी संस्थाओं से बाहर निकल आयें और तब तक वापस न जाएँ, जब तक संस्था के व्यवस्थापक पछताकर उन्हें वापस न बुलायें। किसी भी हालत में और किसी भी विचार से उन्हें अपने से भिन्न मत रखनेवाले विद्यार्थियों या स्कूल-कॉलेज के अधिकारियों के साथ जबरदस्ती न करनी चाहिए। उन्हें यह विश्वास होना चाहिए कि अगर वे अपनी मर्यादा के अनुरूप व्यवहार करेंगे और मिलकर रहेंगे तो जीत उन्हीं की होगी।
- सब विद्यार्थियों को सेवा की खातिर शास्त्रीय तरीके से कातना चाहिए। कताई के अपने साधनों और दूसरे औजारों को उन्हें हमेशा साफ-सुथरा सुव्यवस्थित और अच्छी हालत में रखना चाहिए। संभव हो तो वे अपने हथियारों, औजारों या साधनों को खुद ही बनाना सीख लें। अलबत्ता, उनका काता सूत सब से बढ़िया होगा। कताई-सम्बन्धी सारे साहित्य का उसमें छिपे आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और राजनीतिक सब रहस्यों का उन्हें अध्ययन करना चाहिए।
- ४. अपने पहनने-ओढ़ने के लिए वे हमेशा खादी का ही उपयोग करें, और गाँवों में बनी चीजों के बदले परदेश की या यंत्रों की बनी वैसी चीजों को कभी न बरतें।
- वन्देमातरम् गाने या राष्ट्रीय झण्डा फहराने के मामले में दूसरों पर जबरदस्ती न करें। राष्ट्रीय झण्डे के बिल्ले वे खुद अपने बदन पर चाहे लगायें, लेकिन दूसरों को उसके लिए मजबूर न करें।
- ६. तिरंगे झण्डे के सन्देश को अपने जीवन में उतारकर दिल में साम्प्रदायिकता या अस्पृश्यता को घुसने न दें। दूसरे धर्मोंवाले विद्यार्थियों और हरिजनों को अपने भाई समझकर उनके साथ सच्ची दोस्ती कायम करें।

- ७. अपने दुखी-दर्दी पड़ोसियों की सहायता के लिए वे तुरन्त दौड़ जाएँ; आसपास के गाँवों में सफाई का और भंगी का काम करें और गाँवों के बड़ी उमरवाले स्त्री-पुरुषों व बच्चों को पढावें ।
- ८. आज हिन्दुस्तान का जो दोहरा स्वरूप तय हुआ है, उसके अनुसार दोनों शैलियों और दोनों लिपियों के साथ वे राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी सीख लें, ताकि जब हिन्दी या उर्दू बोली जाए अथवा नागरी या उर्दू लिपि लिखी जाए, तब उन्हें वह नई न मालूम हो।
- ९. विद्यार्थी जो भी कुछ नया सीखें, उस सब को अपनी मातृभाषा में लिख लें और जब वे हर हफ्ते अपने आसपास के गाँवों में दौरा करने निकलें, तो उसे अपने साथ ले जाएँ और लोगों तक पहुँचाये।
- १०. वे लुक-छिपकर कुछ न करें; जो करें खुल्लम-खुल्ला करें। अपने हर काम में उनका व्यवहार बिलकुल शुद्ध हो। वे अपने जीवन को संयमी और निर्मल बनायें। किसी चीज से न डरें और निर्भय रहकर अपने कमजोर साथियों की रक्षा करने में मुस्तैद रहें; और दंगों के अवसर पर अपनी जान की परवाह न करके अहिंसक रीति से उन्हें मिटाने को तैयार रहें। और, जब स्वराज्य की आखिरी लड़ाई छिड़ जाए, तब अपनी संस्थाएँ छोड़कर लड़ाई में कूद पड़ें और ज़रूरत पड़ने पर देश की आज़ादी के लिए अपनी जान कुरबान कर दें।
- ११. अपने साथ पढ़नेवाली विद्यार्थिनी बहनों के प्रति अपना व्यवहार बिलकुल शुद्ध और सभ्यतापूर्ण रखें।

उपर विद्यार्थियों के लिए मैंने जो कार्यक्रम सुझाया है, उस पर अमल करने के लिए उन्हें समय निकालना होगा। मैं जानता हूँ कि वे अपना बहुत-सा समय यों ही बरबाद कर देते हैं। अपने समय में सख्त काट-कसर करके वे मेरे द्वारा सुझाये गये काम के लिए कई घण्टों का समय निकाल सकते हैं। लेकिन किसी भी विद्यार्थी पर मैं बेजा बोझा लादना नहीं चाहता। इसलिए देश से प्रेम रखनेवाले विद्यार्थियों को मेरी यह सलाह है कि वे अपने अभ्यास के समय में से एक साल का समय इसकाम के लिए अलग निकाले; मैं यह नहीं कहता कि एक ही बार में सारा साल दे दें। मेरी सलाह यह है कि वे अपने समूचे अभ्यास-काल में इस साल को बाँट लें और थोड़ा-थोड़ा करके पूरा करें। उन्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस तरह बिताया हुआ साल व्यर्थ नहीं गया। इस समय में की गई मेहनत के जरिये वे देश की आज़ादी की लड़ाई में अपना ठोस हिस्सा अदा करेंगे, और साथ ही अपनी मानसिक, सैतिक और शारीरिक शक्तियाँ भी बहुत-कुछ बढ़ा लेंगे।

सविनय कानून-भंग का स्थान

इन पृष्ठो में मैंने यह बताया है कि रचनात्मक कार्यक्रम के अमल में हम अपने समूचे राष्ट्र का सहयोग प्राप्त कर सकें, तो शुद्ध अहिंसक पुरुषार्थ से आज़ादी हासिल करने के लिए यह ज़रूरी नहीं कि सविनय कानून-भंग या सिविल नाफरमानी की लड़ाई लड़नी ही पड़े। लेकिन कया व्यक्ति और क्या राष्ट्र, किसी को इतना अच्छा सौभाग्य शायद ही कभी मिलता है। इसलिए यहाँ यह समझ लेना ज़रूरी है कि राष्ट्रव्यापी अहिंसक पुरुषार्थ में सविनय कानून-भंग या सत्याग्रह की लड़ाई का क्या स्थान है।

सविनय कानून-भंग के तीन अलग-अलग काम हैं:

- किसी स्थानिय अन्याय या शिकायत को दूर करने के लिए इसका सफल प्रयोग किया जा सकता है।
- किसी खास अन्याय, शिकायत या बुराई के खिलाफ, उसे मिटाने के मसले पर कोई खास असर डालने का इरादा न रखते हुए, स्थानिय जनता को उस अन्याय या शिकायत या बुराई का भान कराने या उसके दिल पर असर डालने के लिए कुरबानी या आत्म-बलिदान की भावना से भी सिवनय कानून-भंग किया जा सकता है। चम्पारन में यही हुआ था। वहाँ अपने काम का क्या असर होगा, इसका हिसाब लगाये बिना और यह अच्छी तरह जानते हुए भी कि शायद लोग जरा भी दिलचस्पी नहीं लेंगे, मैंने कानून का सिवनय-भंग किया था। मेरे काम का नतीजा कुछ और ही हुआ, जो सोचा नहीं गया था। इसे अपनी सोच के अनुसार आप ईश्वर की कृपा या तकदीर का खेल मान सकते हैं।
- रचनात्मक कार्य में जनता का पूरा सहयोग न मिलने पर उसके बदले में सन् १९४१ में छिड़े सत्याग्रह की तरह सिवनय कानून-भंग की लड़ाई छेड़ी जा सकती है। अगरचे वह लड़ाई हमारी आज़ादी की सम्पूर्ण लड़ाई के एक हिस्से के रूप में उसे बल पहुँचाने के खयाल से शुरू की गई थी, फिर भी उसे जानबूझकर भाषण-स्वातंत्र्य के एक खास मुद्दे तक ही मर्यादित रखा गया था। सिवनय कानून-भंग की लड़ाई किसी एक व्यापक हेतु के लिए, मसलन्, पूर्ण स्वराज्य के लिए नहीं लड़ी जा सकती। लड़ाई की माँग स्पष्ट, सामने वाले को साफ साफ समझ में आने वाली और उसके द्वारा पूरी की जा सकने लायक होनी चाहिए। अगर इस तरीके पर ठीक से अमल किया जा सके, तो यह हमें ठेठ अपने लक्ष्य तक ज़रूर ले जाए।

यहाँ सिवनय कानून-भंग के समूचे क्षेत्र की और उसकी तमाम संभावनाओं की कोई पड़ताल मैंने नहीं की। पाठकों को रचनात्मक कार्यक्रम और सिवनय कानून-भंग सम्बन्ध समझाने के लिए जितनी चर्चा ज़रूरी है उतनी ही मैंने यहाँ की है। ऊपर दिये गये पहले दो उदाहरणों में बड़े पैमाने पर रचनात्मक काम की ज़रूरत नहीं; न होनी चाहिए। लेकिन सिवनय कानून-भंग के जिरये सम्पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करने का

रचनात्मक कार्यक्रम | www.mkgandhi.org

इरादा हो, तो पहले से तैयारी करने की ज़रूरत रहती है। और इस तैयारी के पीछे इस लड़ाई में शामिल होनेवाले लोगों के प्रत्यक्ष और सोच-समझकर किए गये पुरुषार्थ का बल होना चाहिए। इस तरह सविनय कानून-भंग लड़वैयों को उत्साहित करनेवाला और प्रतिपक्षी को चुनौती देनेवाला है। पाठकों को यह समझ लेना चाहिए कि पूर्ण स्वराज्य की सिद्धि के लिए सविनय कानून-भंग की लड़ाई, रचनात्मक कार्यक्रम में करोड़ों देशवासियों के सहयोग के अभाव में, निरी बकवास बन जाती है; और वह निकम्मी ही नहीं, नुकसानदेह भी है।

उपसंहार

राष्ट्रीय काँग्रेस की ओर से या उसके केन्द्रीय कार्यालय के कहने से लिखा हुआ यह रचनात्मक कार्य-सम्बन्धी कोई निबन्ध नहीं है। सेवाग्राम के अपने कुछ साथियों के साथ हुई बातचीत के फलस्वरूप यह चीज लिखी गई है। रचनात्मक कार्यक्रम और सिवनय कानून-भंग के बीच क्या जाना चाहिए, इस बारेमें मेरे लिखे लेख की कमी उन्हें खटकती थी। इस पुस्तिका द्वारा मैंने उस कमी को पूरा करने की कोशिश की है। यह पुस्तिका रचनात्मक कार्यक्रम का सम्पूर्ण विचार करने या उसकी हर तफसील में उतरने के इरादे से नहीं लिखी गई है; इसमें तो सिर्फ यह बताया गया है कि रचनात्मक कार्यक्रम का अमल किस तरह किया जा सकता है या किया जाना चाहिए।

रचनात्मक कार्यक्रम के जिन अंगों की चर्चा इस पुस्तिका में की गई है, उनमें से किसी भी एक को पूर्ण स्वराज्य की स्थापना के लिए लड़ी जानेवाली लड़ाई के एक अंग के रूप में सूचित देखकर कोई पाठक उसका मजाक उड़ाने की भूल न करें। अहिंसा के अथवा पूर्ण स्वराज्य की स्थापना के साथ कोई सम्बन्ध न रखते हुए बहुतेरे लोग बहुत से छोटे-बड़े काम करते रहते हैं। इसलिए सहज ही उन कामों का जितना सोचा जाता है उतना ही मर्यादित फल मिलता है। एक सेनापित मामूली नागरिक की पोशाक पहनकर घूमे, तो कोई पूछता भी नहीं कि वह कौन है; लेकिन वही अपने ओहदे के मुताबिक पोशाक पहनकर बहुत बड़ा बन जाता है, और उसके एक शब्द पर लाखों के जीने-मरने का आधार रहता है। इसी तरह एक ग़रीब विधवा के हाथ में पकड़कर चरखा उसके लिए बहुत-बहुत तो पैसे दो पैसे की आमदनी का जिरया बनता है, मगर वही पंडित जवाहरलाल के हाथ में हिन्दुस्तान की आज़ादी का हथियार बन जाता है। चरखे को हमने जो स्थान दिया है और जो काम सौंपा है, उससे उसकी प्रतिष्ठा बढ़ी है। रचनात्मक कार्यक्रम को जो काम सौंपा गया है और उसकी वजह से उसे जो अधिकार मिला है, उसके फलस्वरूप उसे असाधारण प्रतिष्ठा और अमोध सत्ता प्राप्त हुई है।

यह तो हुई मेरी अपनी राय। यह राय एक पागल की धुन या सनक भी हो सकती है। काँग्रेसवालों को मेरी यह राय मंजूर न हो तो वे मुझे छोड़ दें। क्योंकि अगर रचनात्मक कार्यक्रम के बिना मैं सविनय कानून-भंग की लड़ाई लड़ने लगूँ, तो वह लकवे से बेकार बने हुए हाथ से चम्मच उठाने-जैसी बात होगी।

पूना, १३-११-१९४५



परिशिष्ट

१

पशु-सुधार

[रचनात्मक कार्यक्रम में गौ सेवा को एक अंग के रूप में शामिल कर लेने के बारेमें गांधीजी ने जो लिखा था वह नीचे दिया गया है।

-जीवणजी देसाई]

गांधीजी द्वारा श्री जीवणजी देसाई को लिखे गये पत्र का हिस्सा:

सोदापुर, १६-१-१९४६

". . .आपका कहना ठीक है। गौ सेवा के विषय को भी रचनात्मक कार्यक्रम में शामिल करना चाहिए। मैं इसे पशु-सुधार कहूँगा। मेरे विचार से इसे छोड़ना नहीं चाहिए था। अगला संस्करण जब छपेगा, तब हम इसके बारेमें देखेंगे। यदि आप की चालू आवृत्ति झट खतम हो जाए और कोई सुधार या परिवर्धन आपको सूझे तो वह भी बताइये।. . ."

2

काँग्रेस का स्थान और काम

भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस देश की सब से पुरानी राष्ट्रीय राजनीतिक संस्था है। उसने कई अहिंसक लड़ाइयों के बाद आज़ादी हासिल की है। उसे मरने नहीं दिया जा सकता। उसका खात्मा सिर्फ तभी हो सकता है जब राष्ट्र का खात्मा हो। एक जीवित संस्था या तो जीवित प्राणी की तरह लगातार बढ़ती रहती है या मर जाती है। काँग्रेस ने सियासी आज़ादी तो हासिल कर ली है, मगर उसे अभी आर्थिक आज़ादी, सामाजिक आज़ादी और नैतिक आज़ादी हासिल करनी है। ये आज़ादियाँ चूँिक रचनात्मक है, कम उत्तेजक है और भड़कीली नहीं है, इसलिए इन्हें हासिल करना सियासी आज़ादी से ज्यादा मुश्किल है। जीवन के सारे पहलुओं को अपनेमें समा लेनेवाला रचनात्मक काम करोड़ों जनता के सारे अंगों की शक्ति को जगाता है।

काँग्रेस को उसकी आज़ादी का प्रारम्भिक और ज़रुरी हिस्सा मिला गया है। लेकिन उसकी सब से कठिन मंजिल आना अभी बाकी है। लोकशाही व्यवस्था कायम करने के अपने मुश्किल मकसद तक पहुँचने में उसने अनिवार्य रूप से दलबन्दी करनेवाले गन्दे पानी के गड़हों-जैसे मंडल खड़े किए हैं, जिन से घूसणखोरी और बेईमानी फैली है और ऐसी संस्थाएँ पैदा हुई हैं, जो नाम की ही लोकप्रिय और प्रजातांत्रिक हैं। इन सब बुराइयों के जंगल से बाहर कैसे निकला जाए?

काँग्रेस को सब से पहले अपने मेम्बरों के उस खास रजिस्टर को अलग हटा देना चाहिए, जिसमें मेम्बरों की तादाद कभी भी एक करोड़ से आगे नहीं बढ़ी, और तब भी जिन्हें आसानी से पहचाना नहीं जा सकता था। उसके पास ऐसे करोड़ों लोगों का एक अज्ञात रजिस्टर था, जो कभी उसके काम में नहीं आये। अब काँग्रेस का रजिस्टर इतना बड़ा होना चाहिए कि देश के मतदाताओं की सूची में जितने स्त्री-पुरुषों के नाम हैं वे सब उसमें आ जाएँ। काँग्रेस का काम यह देखना होना चाहिए कि कोई बनावटी नाम उसमें शामिल न हो जाए और कोई जायज नाम छूट न जाए। उसके अपने रजिस्टर में उन देश सेवकों के नाम रहेंगे, जो समय-समय पर अपने को सौंपा हुआ काम करते रहेंगे।

देश के दुर्भाग्य से ऐसे कार्यकर्ता फिलहाल खास तौर पर शहरवालों में से ही लिए जावेंगे, जिनमें से ज्यादातर को देहातों के लिए और देहातों में काम करने की ज़रूरत होगी। मगर इस श्रेणी में अधिकाधिक संख्या में देहाती लोग ही भरती किए जाने चाहिए।

इन सेवकों से यह अपेक्षा रखी जायगी कि वे अपने हलकों में कानून के मुताबिक रजिस्टर में दर्ज किए गये मतदाताओं के बीच काम करके उन पर अपना प्रभाव डालें और उनकी सेवा करें। कई व्यक्ति और पार्टियाँ इन मतदाताओं को अपने पक्ष में करना चाहेंगे। जो सब से अच्छे होंगे उन्हीं की जीत होगी। इसके सिवा दूसरा कोई रास्ता नहीं है। इससे काँग्रेस देश में तेजी से गिरती हुई अपनी अनुपम स्थिति को फिर से प्राप्त कर सकेगी। अभी कल तक काँग्रेस भले अनजान में ही देश की सेविका थी। वह खुदाई खिदमतगार थी—भगवान की सेविका थी। अब वह अपने आप से और दुनियाँ से कहे कि वह सिर्फ भगवान की सेविका है—न इससे ज्यादा है, न कम। अगर वह सत्ता हड़पने के व्यर्थ के झगड़ों में पड़ती है, तो एक दिन अचानक देखेगी कि उसकी हस्ती मिट गई है। भगवान को धन्यवाद है कि अब वह जन सेवा के क्षेत्र की एकमात्र स्वामिनी नहीं रही है।

मैंने सिर्फ दूर का दृश्य आप के सामने रखा है। अगर मुझे समय मिला और मेरा स्वास्थ्य ठीक रहा, तो मैं इन कालमों में यह चर्चा करने की उम्मीद रखता हूँ कि अपने मालिकों-सारे बालिग स्त्री-पुरुषों-की नजरों में अपने को ऊँचा उठाने के लिए देश सेवक क्या कर सकते हैं।

नई दिल्ली, २७-१-१९४८

मो. क. गांधी

(हरिजन सेवक, १-२-१९४८)



महात्मा गांधीजी की पुस्तको की सूचि

अनासक्तियोग आरोग्यकी कुंजी काँग्रेस और उसका भविष्य कुदरती उपचार गांधीजीकी अपेक्षा गांधीजीकी संक्षिप्त आत्मकथा

गांधीजीका जीवन उन्हींके शब्दोंमें

ग्राम-स्वराज्य

चारित्र और राष्ट्र निर्माण

दक्षिण अफ्रीकाके सत्याग्रहका इतिहास

पंचायत राज

भारतके नये राज्य

मंगल-प्रभात

मेरी जीवनकथा

मेरे सपनोंका भारत

मोहन-माला

रचनात्मक कार्यकम

रामनाम

राष्ट्र भाषा हिन्दुस्तानी

संरक्षक ताका सिद्धांत

सत्य ही ईश्वर है

सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा (हिन्दी)



सर्वोदय

सहकारी आंदोलन

स्वेच्छासे स्वीकार की हुओ गरीबी

हिंद-स्वराज

हिंद-स्वराज (हस्ताक्षर मेपलीथो)

हिंद-स्वराज (हाथकागळ)

गांधीकथा (हिंदी)

गांधी-गंगा (हिंदी)

हम सब एक पिताके बालक

हमारे गाँवोका पुनर्निर्माण

सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा

- गांधीजी

इस पुस्तक की प्रस्तावना में गांधीजी ने लिखा है: "मेरी विनती है कि कोई मेरे लेखों को प्रमाणभूत न समझें। मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि इनमें बताये गये प्रयोगों को दृष्टांतरूप मानकर सब अपने-अपने प्रयोग यथाशक्ति और यथामित करें। मेरा विश्वास है कि इस संकुचित क्षेत्र में आत्मकथा के मेरे लेखों से पाठकों को बहुत कुछ मिल सकता है।" राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन और कार्यपद्धित को समझने की अभिलाषा रखनेवाले प्रत्येक भारतीय को यह अमूल्य ग्रंथ अवश्य पढ़ना चाहिये। नवजीवन ने यह पुस्तक केवल प्रचार की दृष्टि से ही निकाली है। -

संक्षिप्त आत्मकथा

- गांधीजी

बापूजी की आत्मकथा एक ऐसा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है, जो उनके जीवन तथा विचारों और आदर्शों को समझने में बड़ा सहायक होता है। 'आत्मकथा' का यह संक्षिप्त संस्करण इस अभिलाषा सह तैयार किया है कि यह नई पीढ़ी के किशोरों और युवकों को राष्ट्रपिता बापू के जीवन में प्रवेश करके अपने जीवन को गढ़ने की प्रेरणा और प्रोत्साहन दें।

NAVAJIVAN